श्री भक्तामर स्तोत्र

दीप-अर्चना/ऋद्धि विधान

रचयिता

संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज के शिष्य

अनेक विधान रचयिता बुंदेली संत

मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज

प्रस्तोता

बा० ब्र० संजय भैया, मुरैना

कृति	:	श्री भक्तामर स्तोत्र दीप-अर्चना/ऋद्धिविधान
आशीर्वाद	:	संयम स्वर्ण महोत्सव मण्डित आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज
कृतिकार	:	अनेक विधान रचयिता बुंदेली संत मुनिश्री सुव्रतसागरजी महाराज
प्रसंग	:	मुनिश्री सुव्रतसागरजी महाराज का स्वर्णिम अवतरण वर्ष एवं रजत दीक्षा वर्ष 2023
संयोजक	:	बा॰ ब्र॰ संजय भैयाजी, मुरैना
संस्करण	:	द्वितीय, 1100 प्रतियाँ
सहयोग राशि	:	25/- (पुनः प्रकाशन हेतु)
प्रकाशक	:	विद्यासुव्रत संघ
प्राप्ति स्थान	:	1. बा॰ ब्र॰ संजय भैयाजी, मुरैना मोबाइल-9425128817 2. अमर ग्रंथालय इंदौर, 9425478846
मुद्रक	:	विकास ऑफसेट, भोपाल

पुण्यार्जक

ब्र० शिखा दीदी (प्रतिभास्थली)
श्री रमेशचंद-श्रीमती सुनीता,
आशीष-श्रीमती सुकृति, तोषिका,
सर्वार्थ, धारांश जैन भानगढ़ वाले बीना

अन्तर्भाव

भक्तामर स्तोत्र श्री जिनेन्द्र भक्ति का श्रेष्ठतम काव्य है। द्वादशांग का सार जिसमें भरा है ऐसा सागर जिसमें अवगाहन करने से दिव्य रत्नों की प्राप्ति होती है। एक-एक काव्य में भक्ति एवं अध्यात्म का रस भरा है। प्रत्येक काव्य एक मन्त्र काव्य है क्योंकि प्रत्येक काव्य में मन्त्र (म्+न्+त्+र्) ये चार अक्षर अवश्य मिलते हैं इसलिए इस स्तोत्र को मन्त्र स्तोत्र भी कहा जाता है। जिस प्रकार णमोकार महामन्त्र में प्रत्येक बीजाक्षर का अपना विशिष्ट महत्व है उसी प्रकार भक्तामर स्तोत्र में हर एक बीजाक्षर मन्त्र हैं। परमपूज्य मानतुंग महाराज ने इन बीजाक्षरों को स्तोत्र माला में इस प्रकार गूंथा है जैसे एक कुशल शिल्पी एक सुंदर हार में रत्नों का सुन्दरतम उपयोग करता है और वह हार सबको अपनी ओर आकर्षित करता है। इसी से आकर्षित होकर **संत शिरोमणि आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज** के सुयोग्य शिष्य अनेक विधान रचयिता बुंदेली संत **पूज्य मुनि श्रीसुव्रतसागरजी महाराज** ने प्रस्तुत कृति "**श्री भक्तामर दीप अर्चना-ऋद्धि विधान**" की रचना करके महान् उपकार किया है। प्रस्तुत कृति में मुनिश्री के द्वारा आचार्य मानतुङ्ग महाराज कृत श्री भक्तामर स्तोत्र के माध्यम से श्रीआदिनाथ भगवान की भक्ति करने का सुन्दर सोपान प्रदान किया है साथ ही प्रत्येक काव्य की बुंदेली रचना भक्ति रस को और भी मधुर बना देती है। यह भक्ति-रचना श्रावकों को भक्ति करने में पूर्ण सहयोगी बनेगी।

भक्त को जन्म-जरा और मृत्यु से मुक्ति दिलाने वाला, लोकप्रिय और प्रभावशाली स्तोत्र है जिसकी प्रभावना पूर्व-पश्चिम-उत्तर-दक्षिण चारों ओर है। इस स्तोत्र को बिना किसी भेद-भाव से दिगम्बर और श्वेताम्बर परम्परा में श्रद्धापूर्वक पढ़ा जाता है क्योंकि यह स्तोत्र स्वयं में सिद्ध है और हर कार्य में सिद्धि दिलाने वाला है। श्रद्धा के साथ भक्ति की भावना से ४८ अर्घ्य/दीपों के साथ अथवा एक दीप के साथ इस स्तोत्र की आराधना करने से सभी इष्ट कार्य की सिद्धि होती है। इस स्तोत्र की आराधना में आत्मकल्याण के साथ विश्वशांति की भावना निहित होती है और सभी तरह के रोग-शोकादि दूर होते हैं तथा परमार्थ सुख की प्राप्ति होती है। इस आराधना से अभी तक बहुत से लोगों ने अपनी मनोकामना और मनोभावना पूर्ण की है आप भी करें। सभी जीवों के कल्याण की भावना के साथ...

बा० ब्र० संजय, मुरैना

मंगल मंत्र

धर्म चाहने वाले बोलें, ओम् णमो अरिहंताणं।
मोक्ष चाहने वाले बोलें, ओम् णमो सिद्धाणं।
दीक्षा चाहने वाले बोलें, ओम् णमो आइरियाणं।
शिक्षा चाहने वाले बोलें, ओम् णमो उवज्झायाणं।
शांति चाहने वाले बोलें, ओम् णमो लोए सव्वसाहूणं॥
जिनशासन के दर्शक बोलें, एसो पंच णमोयारो।
नवदेवों के सेवक बोलें, सव्व पावप्पणासणो।
सिद्धों के आराधक बोलें, मंगलाणं च सव्वेसिं।
शुद्धातम के भावक बोलें, पढमं होई मंगलम्॥

मंगल भावना

तेरा मंगल मेरा मंगल, सबका मंगल होवे।
सुखिया होवे सारी दुनियाँ, कोई दुखी न होवे॥
कण-कण मंगल क्षण-क्षण मंगल, जन-जन मंगल होवे।
हे प्रभु! निजमंगल के पहले, जग का मंगल होवे॥ 1॥ तेरा...
जिन माँ बापू ने जन्मा है, उनका मंगल होवे।
जिन बन्धु ने पाला पोषा, उनका मंगल होवे॥
जिन मित्रों ने हमें सम्हाला, उनका मंगल होवे।
जिन गुरुओं ने ज्ञान दिया है, उनका मंगल होवे॥ 2॥ तेरा...
जो धरती नभ आश्रय देते, उनका मंगल होवे।
जिस जलवायु से जीते हैं, उसका मंगल होवे॥
जिस अग्नि से जीवन चलता, उसका मंगल होवे।
जिन तरुओं से भोजन मिलता, उनका मंगल होवे॥3॥ तेरा...

हम जिस दुनियाँ में रहते हैं, उसका मंगल होवे।
हम जिस भारत देश में रहते, उसका मंगल होवे॥
हम जिस राज्य प्रान्त में रहते, उसका मंगल होवे।
हम जिस नगर शहर में रहते, उसका मंगल होवे॥ 4॥ तेरा...
हम जिस धर्म समाज में रहते, उसका मंगल होवे।
हम जिस कुल परिवार में रहते, उसका मंगल होवे॥
हम जिस घर-आलय में रहते, उसका मंगल होवे।
हम जिस देह शरीर में रहते, उसका मंगल होवे॥ 5॥ तेरा...

===

श्री भक्तामर दीप अर्चना

इस तरह स्वस्ति बनाकर प्रत्येक गोल बिन्दु पर एक-एक दीपक सजाते हुए भक्तामर दीप महा अर्चना कीजिए।

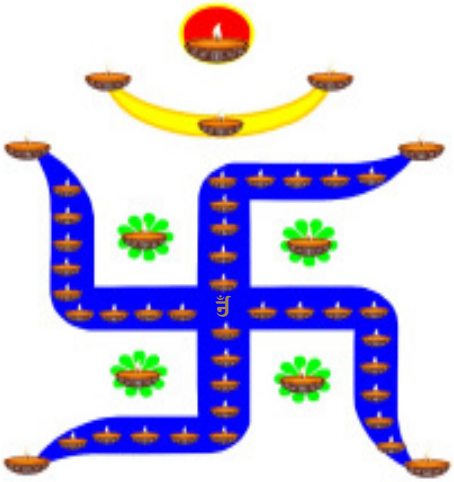

श्री नवदेवता पूजन

(हरिगीतिका)

जब प्रार्थना को कर जुड़े तो, आतमा आकुल हुई।
जब वन्दना को पग उठे तो, वेदना व्याकुल हुई॥
जब साधना को सुर सजे तो, गुनगुनाएँ गीत हम।
जब अर्चना को मन हुआ तो, आ गए जिन-तीर्थ हम॥
अरिहन्त सिद्धाचार्य गुरु-उवझाय साधु जिन-धरम।
जिन-शास्त्र-प्रतिमाएँ जिनालय, देवता ये नव परम॥
नव देवताओं की करें हम, अर्चना पूजें चरण।
बस प्रार्थना हम भक्त की सुन, दीजिए हमको शरण॥

(दोहा)

नव देवों को हम भजें, करें-करें आह्वान।
हृदयासन आसीन हों, भक्तों के भगवान॥

ॐ ह्रीं श्रीअर्हत्-सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालय समूह अत्र अवतर-अवतर...। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

(सखी)

अपने ही हमको जन्में, फिर मारें और जलाएँ।
फिर पीछे आँसु बहाके, कर हाय! हाय! चिल्लाएँ॥
मृग मरीचिका अपनों की, तुम सम तजने जल लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं...।

हम करें भरोसा जिन पर, वे धोखे हमको देते।
हम दिल में जिन्हें वसाएँ, वे राख हमें कर देते॥
तुम सम अपनों की तृष्णा, हम तजने चंदन लाए।

नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः संसारतापविनाशनाय चंदनं...।

हम जिनको गले लगाएँ, वे गला हमारा घोंटें।
वे हमको खूब रुलाएँ, हम जिनके आँसू पोंछें॥
यह अपनों की आकुलता, तजने हम अक्षत लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

अपने ही फाँसी दें फिर, फोटो पर माला डालें।
वाणी के बाण चलाके, चित् छिन्न-भिन्न कर डालें॥
तुम सम अपनों के काँटे, तजने पुष्पों को लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः कामबाणविध्वंसनाय पुष्पाणि...।

खुद भूखे प्यासे रहकर, अपनों की भूख मिटाई।
जीवन में विष वे घोलें, जिनको दें दूध मलाई॥
विश्वासघात अपनों का, सहने नैवेद्य चढ़ाएँ।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यः क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं...।

गोदी में जिन्हें खिलाएँ, हम काजल जिन्हें लगाएँ।
हथकड़ी बेड़ियाँ वे दें, हम चलना जिन्हें सिखाएँ॥
यों तजें मोह माया ज्यों, तुम तज निजदीप जलाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं...।

घर जिनका यहाँ वसाकर, जी-जान जिन्हें हम सौंपें।
वे घर-घर हमें फिराएँ, सब पाप हमीं पर थोपें॥

बेरुखी तजें अपनों की, सो धूप भूप को लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

बदनाम हुए हम जिनको, बदनाम हमें वे करते।
सुख चैन वही तो छीनें, फिर हम क्यों उन पर मरते॥
अपनों की आँख-मिचौली, तुम सम तजने फल लाए।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

हम जिनको सगा समझते, वे देकर दगा दबाएँ।
फिर देकर दाग जलाएँ, हम जिन पर प्राण लुटाएँ॥
ये दाग दगा अपनों के, तजने को अर्घ्य चढ़ाएँ।
नव देव हमें आश्रय दो, हम भेंट नमोऽस्तु लाए॥

ॐ ह्रीं श्री नवदेवेभ्यो अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

जयमाला

(दोहा)

जिननवदेवा पूज्य हैं, जिन की जोड़ न तोड़।
अतः कहें जयमालिका, हाथ जोड़ सिर मोड़॥

(भुजंगप्रयात)

जितेन्द्री हितैषी अरिहन्त प्यारे, हमें तारते सो नमोऽस्तु हमारे।
निकर्मा सभी सिद्ध शुद्धात्म धारे, तुम्हीं भक्त के लक्ष्य वन्दन हमारे॥ 1॥
परम पूज्य आचार्य दीक्षादि दानी, यथाजात रत्नत्रयी को नमामि।
हमें मोक्ष का मार्ग दें तत्त्वज्ञानी, नमोऽस्तु तुम्हें हो उपाध्याय स्वामी॥ 2॥
दिगम्बर निरम्बर चिदातम विहारी, सभी साधुओं को नमोऽस्तु हमारी।
यही पंचपरमेष्ठी आदर्श अपने, इन्हें पूजने से हुए पूर्ण सपने॥ 3॥

सदा चक्र जिनधर्म का ही चलेगा, इसी से चिदानन्द हमको मिलेगा।
जिनागम करें पूर्ण अध्यात्म शान्ति, हरें मोह मिथ्यात्व अज्ञान भ्रांति॥ 4॥
जगत् पूज्य जिनबिम्ब हैं चैत्य साँचे, करें दर्श तो भक्त भक्ति से नाँचें।
कृत्रिम अकृत्रिम जिनालय हमारे, समोसर्ण जैसे हमें हैं सहारे॥ 5॥
यही देवता हैं नवो पूज्य स्वामी, इन्हीं की कृपा से मिले मुक्तिरानी।
इन्हीं के मिलें दर्श जब पुण्य जागें, इन्हें पूजने से सभी कष्ट भागें॥ 6॥
जपें जाप तो शुद्ध आतम बनेगी, धरें ध्यान तो ज्ञान ज्योति जलेगी।
अतः प्राप्त छाया इन्हीं की हमें हो, इसी से नमोऽस्तु सदा ही इन्हें हो॥ 7॥
हमें प्राप्त रत्नत्रयी धर्म होवे, पुनः भेद विज्ञान से कर्म खोवें।
नवो देवता से धरें प्रेम हम भी, बनें संत अरिहन्त फिर सिद्ध हम भी॥ 8॥
हमें रूप सत्यं शिवं सुन्दरं दो, चले आए हम भी तभी मंदिरं को।
कि जब तक यहाँ चाँद तारे रहेंगे, सदा गीत 'सुव्रत' तो गाते रहेंगे॥ 9॥

(दोहा)

मुक्तिरमा के धाम हैं, चित् चैतन्य मुकाम।
परमपूज्य नवदेव को, बारम्बार प्रणाम॥

ॐ ह्रीं श्री अर्हत्-सिद्धाचार्य-उपाध्याय-सर्वसाधु-जिनधर्म-जिनागम-जिनचैत्य-चैत्यालयेभ्यो जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

करें पूज्य नवदेवता, विश्वशान्ति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शान्तये शान्तिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्पसम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, नवदेवा जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

===

मंगलाचरण

ओम् नमः सिद्धेभ्यः, ओम् नमः सिद्धेभ्यः॥

(विष्णु)

श्री जिनशासन मोक्षमार्ग में, है अध्यात्म प्रथम।
जिसे प्राप्त करने का साधन, भज लो परमातम॥
परम पूज्य पाँचों परमेष्ठी, नव देवा साँचे।
भक्तामर को करके नमोस्तु, श्रद्धालु नाँचें॥१॥ओम्...
कर्मोदय से मानतुंग मुनि, जब बंधन पाए।
तो शुद्धातम ना ध्याकर के, भक्तामर गाए॥
सो अड़तालीस ताले टूटे, जेल मुक्ति पाए।
तब से अब तक भक्तामर के, भक्त भजन गाए॥२॥ओम्...
सभी-सभी स्तोत्रों में यह, गौरवशाली है।
भव दुख हर्त्ता संकटमोचक, महिमाशाली है॥
छन्द-छन्द के शब्द-शब्द के, अक्षर-अक्षर के।
अतिशयकारी मंत्र देख लो, आदि जिनेश्वर के॥३॥ओम्...
भक्ती श्रद्धा की यह अद्‌भुत, विधा रचाई है।
प्रातिहार्य के वैभव ने तो, ज्योति जलाई है॥
रोग कष्ट भय बंधन हर्त्ता, हृदय पधारो जी।
नाभि-मरु सुत आदि जिनेश्वर, हमें निहारो जी॥४॥ ओम्...
कुंदकुंद गुरु मानतुंग मुनि, सबको हो प्यारे।
सीता सोमा चंदन द्रोपदी, सबको तो तारे॥
सो भक्तामर की भक्ति से, जन्म सँवारेंगे।
'सुव्रत' दास उदास ना लौटे, तुम्हें पुकारेंगे॥५॥ ओम्...

(पुष्पांजलिं...)

श्री भक्तामर विधान

स्थापना (दोहा)

आदिप्रभु की अर्चना, भक्तामर के साथ।
आज रचायें भक्त हम, अतः झुकायें माथ॥

(चौपाई)

मानतुंग से भाव नहीं हैं, चक्रि इन्द्र से द्रव्य नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः पुकारें हाथ जोड़कर, शीश झुकाकर द्वन्द्व छोड़कर।
अंदर बाहर जय-जय गूँजे, हर प्रदेश बस तुमको पूजे॥
आह्वानन कर जोड़ें कड़ियाँ, प्रभु मिलन की आईं घड़ियाँ।
चौक रंगोली पुरा रहा मन, हृदय कमल ने दिया सिंहासन॥
विरह वेदना शीघ्र मिटा दो, या तो अपने पास बुला लो।
या अखियों से आओ भगवन्, साथ रहेंगे फिर तो हम-तुम॥

(सोरठा)

मिले मुक्ति का योग, शुद्ध आत्म उपयोग से।
अतः भक्ति का योग, करें शुद्ध त्रय योग से॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर अवतर...। अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः...। अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्...। (पुष्पांजलिं...)

मानतुंग सी भक्ति नहीं है, चक्रि इन्द्र सी शक्ति नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः भक्ति को बिना छिपाए, प्रासुक जल पूजन को लाए।
चरण चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, भक्ति शक्ति के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं...।

मानतुंग सी नहीं है समता, चक्रि इन्द्र सा सुख नहीं जमता।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, वन्दन को चन्दन हम लाए॥
चरण चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, संकट में समता सिखला तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं...।

मानतुंग सा रूप नहीं है, चक्रि इन्द्र से भूप नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, उज्ज्वल तंडुल हम भी लाए।
पुंज चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, जिन दीक्षा के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान्...।

मानतुंग सा त्याग नहीं है, चक्रि इन्द्र सा राग नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, पुष्प अंजली में हम लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, कमलासन के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पाणि...।

मानतुंग से योग नहीं हैं, चक्रि इन्द्र से भोग नहीं हैं।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, ये नैवेद्य शुद्ध ले आए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, वीतरागता रस से भर तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं...।

मानतुंग सा ध्यान नहीं है, चक्रि इन्द्र का मान नहीं है।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥

अतः शक्ति को बिना छिपाए, पूजन को दीपक हम लाए।
करें आरती करके नमोऽस्तु, समवसरण के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोहान्धकार-विनाशनाय दीपं...।

मानतुंग सी नहीं साधना, चक्रि इन्द्र सी नहीं कामना।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, धूप सुगंधित हम ले आए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, तीर्थंकर के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्मदहनाय धूपं...।

मानतुंग सा रत्नत्रय ना, चक्रि इन्द्र से रत्न विजय ना।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, प्रासुक श्रीफल हम भी लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, मुक्ति वधू के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं...।

मानतुंग सा नहीं आचरण, चक्रि इन्द्र सा नहीं समर्पण।
फिर भी पूजन तो करते हैं, आदिनाथ प्रभु को भजते हैं॥
अतः शक्ति को बिना छिपाए, अर्घ्य बनाकर हम भी लाए।
तुम्हें चढ़ाएँ करके नमोऽस्तु, सिद्धालय के योग्य बना तू॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

पंचकल्याणक अर्घ्य

(दोहा)

दोज कृष्ण आषाढ़ को, सर्वारथ सुर त्याग।
गर्भ वसे मरुमात के, 'जिन' से है अनुराग॥

ॐ ह्रीं आषाढ़कृष्णद्वितीयायां गर्भमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

नाभिराय के आँगने, जन्म लिये भगवान्।
चैत्र कृष्ण नवमीं हुई, जग में पूज्य महान्॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां जन्ममङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

चैत्र श्याम नवमीं दिना, बने दिगम्बर नाथ।
मोह तजा आतम भजा, जिन्हें नमें नत माथ॥

ॐ ह्रीं चैत्रकृष्णनवम्यां तपोमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

ग्यारस फाल्गुन कृष्ण में, घातिकर्म सब नाश।
बने केवली लोक ये, नम्र हुआ बन दास॥

ॐ ह्रीं फाल्गुनकृष्ण-एकादश्यां ज्ञानमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

माघ कृष्ण चौदस दिना, हरे कर्म का भार।
हिमगिरि से शिवपुर गए, हम पाए त्यौहार॥

ॐ ह्रीं माघकृष्णचतुर्दश्यां मोक्षमङ्गलमण्डिताय श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं...।

जयमाला

(दोहा)

मानतुंग सम हम भजें, आदिनाथ भगवान।
करके नमोऽस्तु हम करें, जयमाला गुणगान॥

(चौपाई)

जिनशासन की महिमा न्यारी, कह न सकेंगे हम संसारी।
अतः स्तुति का लिया सहारा, ये ही देगा मोक्ष किनारा॥1॥
जितने जो स्तोत्र भजन हैं, सब में प्रभु की भक्ति सृजन है।
लेकिन भक्तामर की पूजा, स्तोत्र पाठ सम कोई न दूजा॥2॥
छन्द-छन्द में काव्य-काव्य में, धर्म भरा है वाक्य-वाक्य में।
और कहें क्या गद्य-पद्य में, मंत्र भरे हैं शब्द-शब्द में॥3॥

इसीलिये तो भक्तामर का, चमत्कार अक्षर-अक्षर का।
अतिशय पाते हैं श्रद्धालु, निज वैभव पाते धर्मालु॥4॥
रोग-शोक भय बन्ध नशाएँ, ऋद्धि-सिद्धि धन सम्पद पाएँ।
अत: इष्ट है भक्तामर जी, उच्च श्रेष्ठ है भक्तामर जी॥5॥
शान्ति प्रदायक भक्तामर जी, भक्ति विधायक भक्तामर जी।
श्रद्धादायक भक्तामर जी, धर्म सहायक भक्तामर जी॥6॥
पाप विनाशक भक्तामर जी, पुण्य प्रकाशक भक्तामर जी।
आत्म रसिक है भक्तामर जी, स्वर्ग पथिक है भक्तामर जी॥7॥
पूज्य मंत्र है भक्तामर जी, मोक्ष तंत्र है भक्तामर जी।
अतिशयकारी भक्तामर जी, जय हो! जय हो! भक्तामर जी॥8॥

(सोरठा)

भक्तामर को पूज, जिन महिमा चिद्रूप हों।
गूँजें नमोऽस्तु गूँज, 'सुव्रत' शुद्ध स्वरूप हों॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं महाबीजाक्षरसम्पन्न श्रीवृषभनाथजिनेन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

वृषभनाथ स्वामी करें, विश्वशांति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान॥

(शांतये शांतिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भवदु:खों को मेंट दो, आदिनाथ जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

===

1. सर्वविघ्नविनाशक - जिनपदवन्दन

(वसन्ततिलका)

भक्तामर - प्रणत - मौलि - मणि -प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित - पाप - तमो - वितानम्।
सम्यक् प्रणम्य जिन - पाद - युगं युगादा-
वालम्बनं भव - जले पततां जनानाम्॥

(विष्णु)

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
भक्त सुरों के नत मुकुटों की, मणि चमकाते जो।
जग में फैला पाप-अँधेरा, पूर्ण मिटाते जो॥
भव-जल-पतितों के अवलंबन, बने युगादिक में।
उन जिन-चरण-कमल को सम्यक्, करूँ नमोऽस्तु मैं॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

बुंदेली पद्यानुवाद (मात्रिक सवैया/आल्हा)

भक्तामर के नत मुकुटों की, मणियों में जो भरें प्रकाश।
जग में पसरौ पाप अँधेरौ, जो कर देवें सत्यानाश॥
भवसागर में डूबे जन खों, जो युगादि में भये जहाज।
नौंने से कर उने नमोऽस्तु, उनके गोड़े पर लूँ आज॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं विश्वविघ्नहारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—जो भक्तिवश झुकते हुए देवों के मुकुटों की रत्न-कान्ति को दीप्तिमान करते हैं, पाप-अन्धकार को दूर करते हैं तथा संसार सागर में डूबने वाले प्राणियों की रक्षा करने वाले जिनेन्द्र देव के चरणों में प्रणाम करके मैं यह स्तुति करता हूँ।

2. सकलरोग नाशक - स्तुति का संकल्प

यः संस्तुतः सकल-वाङ्मय - तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि - पटुभिः सुर - लोक- नाथैः।
स्तोत्रैर्जगत् - त्रितय - चित्त - हरैरुदारैः,
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
सकल जिनागम तत्त्वज्ञान से, बुद्धि कला पा के।
त्रय जग का चित हरने वाले, गीत रचा गा के॥
सुर पतियों ने जिन जिनवर का, जग में यश गाया।
उन ही प्रथम जिनेश्वर की मैं, स्तुति करने आया॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

सबरे श्रुत की तत्त्व बुद्धि पा, जो खूबई बन गए हुसयार।
तीनंई जग के मन खों मोहें, ऐसे रच स्तोत्र हजार॥
बड्डे बड्डे स्तोत्रों सें सुरपति सें स्तुत जिनराज।
उन आदिबाबा की स्तुति, मोखों भी करनें है आज॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं नानामरसंस्तुत-सकलरोगहारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—सम्पूर्ण द्वादशांग का ज्ञान होने से प्रखर बुद्धियुक्त इन्द्रों ने तीनों लोकों के चित्त को लुभाने वाले प्रशस्त स्तोत्रों से जिन आदिनाथ भगवान की स्तुति की थी, उन आदिनाथ भगवान् की स्तुति करने के लिए मैं अल्पज्ञ उद्यत होता हूँ, यह आश्चर्य की बात है।

3. सर्वसिद्धिदायक - लघुता अभिव्यक्ति

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित - पाद - पीठ!
स्तोतुं समुद्यत - मतिर्विगत - त्रपोऽहम्
बालं विहाय जल -संस्थित-मिन्दु-बिम्ब-
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जिनके चरण कमल देवों से, नित अर्चित माने।
मैं निर्लज्ज बुद्धि बिन उनके, उद्यत गुण गाने॥
जैसे जल में चन्द्र बिम्ब जो, लगे ठहरने को।
तो बच्चे बिन कौन? अन्य वह, चले पकड़ने को॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें जल में परबे वारी, चन्दा मामा की परछांई।
तन्नक से मौंड़ा मौंड़ी बिन, कौन पकरबे मचलै भाई॥
ऊँसइ मोय कछू नैं आवे, तौ भी सबरी लाज विसार।
सुर अर्चित जो पद उनके मैं, गुण गावे हो गओ तज्जार॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं मत्यादि सुज्ञानप्रकाशक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे विद्वानों द्वारा पूज्य-चरण भगवन्! मैं आपकी स्तुति करने योग्य बुद्धि न रखता हुआ भी लज्जा छोड़कर आपकी स्तुति करने के लिए तत्पर हुआ हूँ। जैसे पानी में प्रतिबिम्बित चन्द्रमा को बच्चे के सिवाय अन्य कौन बुद्धिमान मनुष्य पकड़ना चाहता है? अर्थात् कोई नहीं।

4. जलजन्तु-मोचक - अवर्णनीय जिनवर गुण

वक्तुं गुणान्गुण -समुद्र ! शशाङ्क-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुर - गुरु-प्रतिमोऽपि बुद्ध्या।
कल्पान्त -काल - पवनोद्धत - नक्र- चक्रम्,
को वा तरीतुमलमम्बुनिधिं भुजाभ्याम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
चारु चन्द्र सम गुण-समुद्र के, गुण-गण कौन कहे?
सुरपति जैसा भी निजमति से, कैसे उन्हें कहें?॥
मच्छ समूहों के सागर में, जब तूफाँ उठता।
तो वह अपने बाहुबलों से, कौन तैर सकता?॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें सागर खों हातों सें, जे में हो मगरा घड़याल।
उत्तई पै तूफान उठैं तौ, पार करै को माई कौ लाल॥
ऊँसइ चन्दा मामा जैंसे, स्वच्छ गुणों के सागर जौन।
उनके गुण गा सकें नें सुरगुरु, तौ गावे में समरथ कौन॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं नानादुःखसमुद्रतारक क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे गुणसागर प्रभो! आपके चन्द्र समान उज्ज्वल गुणों को वृहस्पति के समान बुद्धिमान् विद्वान् भी अपनी बुद्धि से नहीं कह सकता। जैसे कि प्रलयकाल की प्रबल वायु से उद्वेलित, मगरमच्छों के भरे हुए समुद्र को अपनी भुजाओं से कौन पार कर सकता है? अर्थात् कोई नहीं।

5. अक्षिरोग संहारक - उमड़ती हुई भक्ति प्रेरणा

सोऽहं तथापि तव भक्ति - वशान्मुनीश!
कर्तुं स्तवं विगत - शक्ति - रपि प्रवृत्तः।
प्रीत्यात्म - वीर्य - मविचार्य मृगी मृगेन्द्रम्
नाभ्येति किं निज-शिशोः परिपालनार्थम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
हे मुनीश! बस भक्ति भावना, से लाचार हुआ।
शक्ति हीन तुमरी थुति करने, मैं तैयार हुआ॥
जैसे निज बल बिना विचारे, हिरणी कैसे भी।
बस प्रीती से शिशु रक्षा को, लड़े शेर से भी॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें अपने शिशु के लाने, लाड़ प्यार सैं राखनहार।
का हिरनी नैं लड़े शेर सैं, अपनी हिम्मत बिना विचार॥
ऊँसइ हिम्मत बिना विचारें, भक्ति भाव सैं मैं मजबूर।
हे मुनीश! आपइ कौ संस्तव, करबे उद्यत भओ भरपूर॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं सकलकार्य-सिद्धिकारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे मुनिनाथ! जैसे हिरणी शक्ति न होते हुए भी केवल प्रेमवश अपने बच्चे की रक्षा के लिए सिंह का सामना करती है, उसी प्रकार मैं भी बौद्धिक शक्ति न होने पर भी श्रद्धामात्र से आपका स्तवन करने के लिए प्रवृत्त हुआ हूँ।

6. सरस्वती-भगवती-विद्या प्रसारक - स्तवन में मात्र भक्ति ही कारण

अल्प- श्रुतं - श्रुतवतां परिहास धाम,
त्वद्-भक्तिरेव मुखरी कुरुते बलान्माम्।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र -चारु -कलिका-निकरैक -हेतुः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
मैं मूरख तो विद्वानों से, हँसी पात्र देखो।
लेकिन जबरन भक्ति आपकी, कहे बोलने को॥
आम मञ्जरी की ज्यों कोयल, देखे फुलबाड़ी।
तो होकर मजबूर बोलती, कुहु कुहु की वाणी॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥
जैंसें जब बसन्त में देखें, मधुर गुच्छ आमों कौ मौर।
तौ कोयल जौ बोलै ओ में, जौई एक कारन नैं और॥
ऊँसइ मैं अज्ञानी मोरी, खिल्ली उड़ाएँ जानमकार।
तौ भी मोय तुमारी भक्ति, करै बोलवै खौं लाचार॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं याचितार्थ प्रतिपादन-शक्तिसम्पन्न-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे जिनेश! जिस तरह अबोध कोयल वसन्त ऋतु में कवेल आम्रमंजरी का निमित्त पाकर मधुर ध्वनि करती है, उसी प्रकार अल्पज्ञ और विद्वानों के हास्यपात्र मुझे आपकी भक्ति ही आपकी स्तुति करने के हेतु जबरन वाचाल कर रही है।

7. सर्वदुरित संकट क्षुद्रोपद्रव निवारक-पापक्षयी जिनवर स्तुति

त्वत्संस्तवेन भव - सन्तति-सन्निबद्धम्,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम्।
आक्रान्त-लोक - मलि -नील-मशेष-माशु,
सूर्यांशु- भिन्न-मिव शार्वर-मन्धकारम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
भौंरे जैसा रात अँधेरा, जो जग को ढाँके।
सूर्य किरण को देख भागकर, दूर कहीं काँपे॥
वैसे भव-भव में जीवों से, जो भी पाप हुए।
हे प्रभु! तेरे संस्तव से वे, क्षण में नाश हुए॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

ज्यों जग में भौंरे सी करिया, अँधयारे की पसरी रात।
किरन ताक एकइ सूरज की, झट्ट कुजाने कहाँ विलात॥
ऊँसइ दुनियाँ के मान्सों के, भव-भव के एकट्ठे पाप।
नाथ! तुमारे संस्तव सैं बस, छिन में छय हों आपई आप॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं सकलपापफल कुष्टनिवारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे प्रभो! जिस तरह सूर्य की किरणों द्वारा रात्रि का समस्त अन्धकार नष्ट हो जाता है, उसी तरह आपके स्तवन से प्राणियों के अनेक जन्म (भव) में संचित पाप नष्ट हो जाते हैं।

8. सर्वारिष्ट योग निवारक-प्रभु की प्रभुता का प्रभाव

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद -
मारभ्यते तनु- धियापि तव प्रभावात्।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ता-फल - द्युति-मुपैति ननूद-बिन्दुः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
अल्प बुद्धि वाले मैंने यह, शुभ आरम्भ किया।
नाथ! आपका संस्तव मानो, छन्दो बद्ध किया॥
सज्जन जन का मन हर लेगा, कृपा आपकी से।
कमल पत्र पर जैसे जल कण, चमकें मोती से॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

मैं तन्नक सी बुद्धि बारौ, चालू करूँ बखान तुमाव।
ऐसों मानूं कै जौ संस्तव, पाकै तुमरौ संग प्रभाव॥
ऊँसइ सबरौं कौ मन हर है, जैंसें साँचउं जल की बूँद।
कमलों के पत्तों पै गिर कैं, मोती सी चमकत है खूब॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदानुसारीणं अनेकसंकट संसारदुःख-निवारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे प्रभो! जिस तरह कमलिनी के पत्र पर पड़ी हुई पानी की बूँद उस पत्र के प्रभाव से मोती के समान सुन्दर दिखकर दर्शकों के चित्त को हरती है, उसी प्रकार मुझ मन्दबुद्धि द्वारा की गई आपकी स्तुति भी आपके प्रभाव में सज्जनों के चित्त को हरेगी।

9. कथा ही पापनाशक है

आस्तां तव स्तवन - मस्त-समस्त-दोषं,
त्वत्सङ्कथाऽपि जगतां दुरितानि हन्ति।
दूरे सहस्त्रकिरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकासभाञ्जि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
सूरज दूर रहे बस उसकी, किरणें ही मिलते।
पद्म सरोवर के सब पंकज, विकसित हों खिलते॥
हे! प्रभु विमल आपका संस्तव, उसका कहना क्या?
केवल कथा आपकी जग की, हरले व्यथा कथा॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें सूरज कौ का कैंनें, ओ की एकइ किरन निहार।
तालाबों के सबइ कमल तौ, हँसे खिलें लैं आँए बहार॥
ऊँसइ बिना दोष कौ संस्तव, ओ की का कैंनें है बात।
कथा अकेली हे प्रभु तोरी, जग के सबरे पाप नशात॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो संभिण्णसोदाराणं सकल-मनोवांक्षित फलदायक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे जिनेश! आपके निर्दोष स्तवन में तो अचिन्त्य शक्ति है ही परन्तु आपकी पवित्र कथा सुनना ही प्राणियों के पापों को नष्ट कर देता है, जैसे सूर्य तो दूर ही रहता है परन्तु उसकी उज्ज्वल किरणें ही सरोवरों में कमलों को विकसित कर देती हैं।

10. कूकरविषनिवारक-भगवत् पददातृ भक्ति

नात्यद्-भुतं भुवन - भूषण! भूत-नाथ!
भूतैर्गुणैर्भुवि भवन्त - मभिष्टुवन्तः,
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा
भूत्याश्रितं य इह नात्मसमं करोति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
भूतनाथ हे! जग आभूषण, इसमें विस्मय ना।
भू पर सद्गुण से थुति करता, तुम सम तुल्य बना॥
आखिर उस स्वामी से क्या? जो, अपने आश्रित को।
अपना वैभव दे अपने सम, कभी न करता हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

ये में भौत बड़ों का अचरज, हे जगभूषण! हे जगनाथ!
कै नौंने-नौंने सद्गुण सैं, जो करकैं स्तुति गुण-गात॥
वौ बन जाए तुमारे घांई, पर औ सैं का मतलब होय।
जो नैं बनावै अपने घांई, दे कैं अपनी दौलत मोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं अर्हत्-जिनस्मरण जिनसम्भूत-क्लीं महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे भुवनरत्न! यदि सत्यार्थ गुणों द्वारा आपकी स्तुति करने वाले मानव आपके ही सदृश हो जायें तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं है ; क्योंकि संसार में उस स्वामी से लाभ ही क्या? जो अपने अधीन व्यक्तियों को अपने समान नहीं बना लेवे।

11. अभीप्सित आकर्षक-जिनदर्शन की महिमा

दृष्ट्वा भवन्त मनिमेष - विलोकनीयम्,
नान्यत्र - तोष- मुपयाति जनस्य चक्षुः
पीत्वा पयः शशिकर - द्युति - दुग्ध-सिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे रसितुं क इच्छेत्?॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
चन्द्र किरण सम क्षीर सिन्धु का, पीकर जल मीठा।
क्षारसिन्धु का कौन? चाहता, पीना जल तीखा॥
यों ही बिना पलक झपकाए, दर्शन योग्य तुम्हीं।
तुम्हें देखकर जग की नजरें, टिके न अन्य कहीं॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें चन्दा जैंसौ उजरौ, मीठौ क्षार सिन्धु कौ नीर।
पी कैं को चखबौ चाहेगौ, क्षार सिन्धु कौ खारौ नीर॥
ऊँसइ बिन पलकैं झपकायें, तुम तौ हौ दर्शन के लाक।
तुमें देख कैं और कितउँ तौ, टिकै लगै नैं मोरी आँख॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं सकल तुष्टि-पुष्टि कारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे लोकोत्तम! जैसे क्षीरसागर के निर्मल और मिष्ट जल का पान करने वाला मनुष्य अन्य समुद्र के खारे पानी को पीने की इच्छा नहीं करता, उसी प्रकार आपकी वीतराग मुद्रा को निरखकर मनुष्यों के नेत्र अन्य देवों की सरागमुद्रा को देखने से तृप्त नहीं होते।

12. हस्ति-मद विदारक, वांछित रूप प्रदायक-अनुपम सौन्दर्य

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्-त्वम्,
निर्मापितस्- त्रि - भुवनैक - ललाम-भूत!
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समान- मपरं न हि रूप-मस्ति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
अद्वितीय जो एक त्रिजग में, तन सुन्दर प्यारा।
जिन शांति प्रिय अणुओं से वह, निर्मापित न्यारा॥
भू पर वे अणु बस उतने ही, बने जिन्हें पूजा।
अतः आप सम रूप सलौना, दिखे नहीं दूजा॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

तीन लोक के वे अणु जिनकौ, ठण्डौ पर गऔ सबरौ राग।
और भौत खबसूरत हैं जो, जिनसैं तोय बनाऔ नाथ॥
वे परमाणू ये धरती पै, उत्तइ हते विरागी रूप।
जबइं कोउ नैं तुमरे जैंसौ, खबसूरत चैतन्य सरूप॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं वांछितरूपफल प्रदायक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे लोकशिरोमणे! आपके शरीर की रचना जिन पुद्गल परमाणुओं से हुई, वे परमाणु लोक में उतने ही थे। यदि अधिक होते तो आप जैसा रूप औरों का भी होना चाहिए था, किन्तु वास्तव में पृथ्वी पर आपके समान सुन्दर कोई दूसरा नहीं।

13. लक्ष्मी-सुख प्रदायक, स्वशरीर रक्षक-सर्व उपमा विजयी मुख

वक्त्रं क्व ते सुर - नरोरग-नेत्र-हारि,
निःशेष - निर्जित - जगत्त्रितयोपमानम्।
बिम्बं कलङ्क - मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डुपलाश-कल्पम्।।

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
कहाँ आपका मुख अति सुन्दर, सबके नेत्र हरे ?
त्रय जग की सब उपमाओं पर, जो जय विजय करे॥
और कहाँ वह मलिन चन्द्र जो, दागी कहलाए ?
दिन में जिसकी सुन्दरता तो, फीकी पड़ जाए॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

कितै तुमाई सुन्दर सी मुंइयां, सुरासुरों की नजर चुराए।
जीतै तीनंई जग की सबरी, भौतइ खबसूरत उपमांए॥
और कितै बौ बिम्ब चाँद कौ, मैलौ-दागी सौ कहलाए।
जौन छेवले के पत्तों सौ, दिन में फीकौ सौ पर जाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं लक्ष्मी-सुखविधायक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं.।

अर्थ—हे प्रभो! सुन-नर-असुर के नेत्रों को अपनी ओर आकर्षित करने वाले, समस्त जगत में अनुपम, आपके मुख-मण्डल की बराबरी चन्द्रमा कहाँ कर सकता है जिसमें कि काला लांछन लगा हुआ है तथा जो दिन के समय ढाक के पत्ते की तरह कान्तिहीन हो जाता है।

14. आधि-व्याधि नाशक-लोकव्यापी गुण

सम्पूर्ण- मण्डल-शशाङ्क - कला-कलाप-
शुभ्रा गुणास् - त्रि-भुवनं तव लङ्घयन्ति।
ये संश्रितास् - त्रि-जगदीश्वर नाथ-मेकम्,
कस्तान् निवारयति सञ्चरतो यथेष्टम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
पूर्ण चन्द्र मण्डल सम उज्ज्वल, गुण समूह तेरे।
तीन लोक को लाँघे जिनके, कण-कण में डेरे॥
मिलती जिनवर देव आपकी, उत्तम शरण जिन्हें।
जग में मनवांछित विचरण से, रोके कौन उन्हें?॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

पूरे चंदा जैंसे उजरे, स्वच्छ गुणों के कला कलाप।
वे तुमाय गुण तीनईं जग खौं, लांक-लांक जा कैवें बात॥
कै तीनईं जग के ईश्वर के, रहें आसरे बदलें चाल।
उनखौं इच्छा सें फिरवे सें, रोक सकै को माई कौ लाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं भूतप्रेतादि भयनिवारक क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे गुणाकर! पूर्ण चन्द्र समान उज्ज्वल आपके गुण तीन लोकों को भी लाँघ गये हैं। सो ठीक ही है, जो एक त्रिलोकीनाथ के ही आश्रय रहें उनको यथेच्छ विहार करते हुए कौन रोक सकता है? अर्थात् कोई नहीं।

15. सम्मान सौभाग्य सम्बर्द्धक-अचल मेरु के समान प्रभुता की दृढ़ता

चित्रं - किमत्र यदि ते त्रिदशाङ्ग-नाभिर्-
नीतं मनागपि मनो न विकार - मार्गम्।
कल्पान्त - काल - मरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
पर्वत कंपित करने वाले, प्रलय काल से भी।
सुमेरु पर्वत क्या हिल सकता, कभी जरा सा भी॥
समद अप्सराओं से ऐसे, थोड़ा भी प्रभु मन।
कभी न विकृत होता इसमें, अचरज क्या? भगवन॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

ये में का कैसों अचरज कै, सुर नटियों के तिरिया चरित्र।
तुमाय मन कौ तनक-मनक सौ, चिगा सकौ नैं सुन्दर चित्र॥
प्रलयकाल की जौन हवा सैं, हल्कौ पर्वत तौ हिल जाए।
पै का ओ सैं मंदर गिरि कौ, शिखर तनक सौ भी हिल पाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं मेरुवत्-मनोबलकारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे मनोविजयन्! प्रलय की पवन से यद्यपि पर्वत कम्पित हो जाते हैं तथापि सुमेरुपर्वत लेशमात्र भी चलायमान नहीं होता, उसी प्रकार देवांगनाओं ने यद्यपि अनेक महान् देवों का चित्त चलायमान कर दिया परंतु आपका गंभीर चित्त किसी के द्वारा लेशमात्र भी चलायमान नहीं किया जा सका। इसमें आश्चर्य क्या?

16. सर्व विजयदायक-प्रभो! आप अनोखे दीपक हो

निर्धूम - वर्ति - रपवर्जित - तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत्त्रय - मिदं प्रकटीकरोषि।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानाम्,
दीपोऽपरस्त्वमसि नाथ ! जगत्प्रकाशः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥

धूम्र बाति बिन तेल ज्योति बिन, अजब उजाले हो।
फिर भी त्रय जग करो प्रकाशित, जगत उजाले हो॥
जिसे आँधियाँ बुझा न पाएं, कोई न जान सके।
आप अलौकिक दीपक ऐसे, 'जिन' को शीश झुके॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

धुआँ तेल उर बिना बाति के, तुम तौ आतम जोत जलाए।
ओ सैं सबरे तीनईं जग खौं, परकट करकैं तुमईं दिखाए॥
जौन पहारौं खौं झकझौरे, ऐंसी हवा बुझा नैं पाए।
सब संसार बताबै बारे, तुम तौ अद्भुत दिया कहाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं त्रैलोक्य-लोकवशकारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे त्रिभुवन दीपक! साधारण दीपक तो तेल और बाती से जलता है, धुआँ देता है, थोड़े से स्थान में प्रकाश देता है और वायु के झौंके से बुझ जाता है परन्तु आप ऐसे अनोखे दीपक हैं कि न तो आपको तेल और बाती की आवश्यकता होती है, न आपसे काला धुआँ निकलता है और न पर्वतों को हिला देने वाली वायु आपकी ज्योति बुझा सकती है। आप तीनों लोकों को प्रकाशित करते हैं।

17. सर्वरोग निरोधक-सूर्य से भी अधिक महिमावन्त ज्ञान-भानु

नास्तं कदाचिदुपयासि न राहुगम्यः,
स्पष्टीकरोषि सहसा युगपज्- जगन्ति।
नाम्भोधरोदर - निरुद्ध - महा- प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र! लोके॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
अस्त कभी ना होता जिसको, राहू डस न सके।
जिसके महा प्रभावों को भी, बादल ढँक न सके॥
एक साथ त्रय जग दिखलाते, जग में हो कैसे ?
अधिक सूर्य से महिमा वाले, हो मुनीन्द्र! ऐसे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जो कब्भंऊ नैं डूबत होवे, जे खौं राहू ढक नैं पाए।
जे कौ करिया बदरों सैं तौ, कबऊं असर भी घट नैं पाए॥
तीनंई जग खौं सहज दिखावे, संसारी सूरज सैं तेज।
हे मुनीन्द्र! तुम तौ ऐंसे हौ, तुमें नमोऽस्तु होवे सिर टेक॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहानिमित्तकुसलाणं पापान्धकार-निवारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं.।

अर्थ—हे मुनिनाथ! आपकी महिमा सूर्य से भी अधिक है क्योंकि सूर्य संध्या के समय अस्त हो जाता है परन्तु आप सदा प्रकाशित रहते हैं। सूर्य को राहु ग्रस लेता है परन्तु आज तक वह आपका स्पर्श तक नहीं कर सका। सूर्य सीमित क्षेत्र को प्रकाशित करता है परन्तु आप समस्त लोक को एक साथ प्रकाशित करते हैं और सूर्य के प्रकाश को मेघ ढक लेते हैं परन्तु आपके प्रकाश (ज्ञान) को कोई भी नहीं ढक सकता है।

18. शत्रु-सैन्य-स्तम्भक-अद्भुत मुखचंद्र

नित्योदयं दलित - मोह - महान्धकारम्,
गम्यं न राहु - वदनस्य न वारिदानाम्।
विभ्राजते तव मुखाब्ज - मनल्पकान्ति,
विद्योतयज्-जगदपूर्व-शशाङ्क-बिम्बम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
महा मोह का अंध विनाशक, रहता उदित सदा।
कर न सके राहू भी कवलित, ढके न मेघ कदा॥
कान्तिमान मुखकमल आपका, जगत प्रकाशक जो।
है अपूर्व वह चन्द्रबिम्ब सा, सदा सुशोभित हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

सदा उदित जो रैबे बारौ, मोह अँधेरौ जे सैं जात।
राहू मौं कौ कौर बनै नैं, बदरों सें जो छिप नैं पात॥
बेंजंइ तेज चमकबे बारौ, जो सब जग कौं हर कें अंध।
प्रभु! अपूरब चंदामंडल, सौ सोहे तुमाव मौं चंद॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं चंद्रवत्-सर्वलोको-द्योतनकारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे चन्द्रवदन! महाकान्तिमान आपका मुखकमल अपूर्व अद्भुत चन्द्रमण्डल की तरह शोभित हो जाता है क्योंकि वह सदा उदीयमान रहता है (कभी अस्त नहीं होता), मोह अन्धकार को नष्ट करता है, राहु और बादलों से कभी छिपता नहीं है और समस्त जगत् को प्रकाशित करता है।

19. उच्चाटनादि रोधक-सूर्य चंद्र की अनुपयोगिता

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा,
युष्मन्मुखेन्दु- दलितेषु तमः -सु नाथ!
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनी जीव-लोके,
कार्यं कियज्जल-धरै-र्जल-भार-नम्रैः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जैसे भू पर खड़ी फसल का, पूरा काम हुआ।
जल से भरे झुके मेघों का, तब क्या अर्थ हुआ॥
ऐसे ही मुखचन्द्र आपका, जब सब तम नाशे।
तो फिर दिन में सूर्य रात में, क्या हो चन्दा से ?॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें सोहें फसलें पक कैं, जग में कटवे खों हो जात।
तौ जल के कारे बदरों कौ, कऔ तौ कारज का रै जात॥
ऊँसइ तुमांइ चंदा सी मुंइआ, करै अंध कौ काम तमाम।
तौ रातों में चंदा सैं का, दिन में सूरज सैं का काम॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं सकलकालुष्य-दोषनिवारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे त्रिलोकीनाथ! जिस प्रकार धान्य के पक जाने पर जल से भरे हुए बादलों का बरसना व्यर्थ है, उसी प्रकार आपके मुखचन्द्र द्वारा जब जनता का मोह-अज्ञान-अन्धकार नष्ट हो गया तो दिन के समय सूर्य और रात्रि के समय चन्द्रमा से कुछ प्रयोजन नहीं रहा।

20. संतान-सम्पत्ति-सौभाग्यप्रसाधक-महामणियों जैसा ज्ञान

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशम्,
नैवं तथा हरि - हरादिषु नायकेषु।
तेजो महा मणिषु याति यथा महत्त्वम्,
नैवं तु काच -शकले किरणाकुलेऽपि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
झिलमिल-झिलमिल मणियों में ज्यों, अतिशय चमक रही।
काँच खण्ड की किरणों में त्यों, चमचम दमक नहीं॥
ऐसे अनंतज्ञान आप में, हे प्रभु! शोभित हो।
वैसे तुम से पर देवों में, कभी न ज्योतित हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें जो असली मणियों की ,चमक-धमक की फैले जोत।
का ऊँसी कब्भंउ काँचों की, चकाचौंध किरनों में होत॥
ऊँसइ तुममें ज्ञान भरौ जो, ओ की बात नैं सूझै मोय।
ऊँसौ ज्ञान अन्य देवों में, का सोहै! जो झूठौ होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं केवलज्ञान-प्रकाशक-लोकालोक-स्वरूपी-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे सर्वज्ञ! जैसा पूर्ण ज्ञान आप में विद्यमान है वैसा हरि-हर आदि अन्य किसी में नहीं है। जिस तरह की महत्वपूर्ण कान्ति रत्नों में होती है वैसी कान्ति चमकीले काँच के टुकड़े में नहीं मिलती।

21. सर्वसौख्य-सौभाग्य-साधक-अलंकार पूर्वक स्तुति

मन्ये वरं हरि - हरा - दय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोषमेति।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन्मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
पर देवों के दर्शन कर मैं, उनको श्रेष्ठ कहूँ।
जिन्हें देख बस नाथ आप में, मैं संतोष धरूँ॥
प्रभु तेरा दर्शन यह मुझको, क्या-क्या लाभ करे ?
परभव में भी भू पर कोई, मेरा मन न हरे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

मोय लगत है ऐंसों कै प्रभु, जग के सब प्रभु अच्छे होंय।
लेकिन जब सैं तोखों देखौ, साँचउं कोऊ जमे नैं मोय॥
आपई में संतोष मिलत है, और लाभ का तोसैं होय।
ये धरती पै और कोउ तौ, रिझा सकै नैं कब्भंऊ मोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं सर्वदोषहर-शुभदर्शक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे लोकोत्तम! दूसरे देवों के देखने से तो आप में संतोष होता है यह लाभ है, परन्तु आपके दर्शन कर लेने के बाद अन्य हरि-हर आदि देवों की ओर चित्त नहीं जाता अर्थात् मृत्यु के बाद भी अन्य देवों का दर्शन नहीं करना चाहता।

22. भूत-पिशाचादि-बाधा निरोधक-अपूर्व माता

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्र-रश्मिम्,
प्राच्येव दिग् जनयति स्फुरदंशु-जालम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जगमग-जगमग तारे गण तो, धारें सभी दिशा।
पर तेजस्वी सूरज तो बस, जन्मे पूर्व दिशा॥
यूँ ही सौ-सौ सुत को जनती, सौ-सौ नारी माँ।
पर प्रभु सम अनुपम सुत जनती, कहीं न ऐसी माँ॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

सौ-सौ लुगाइयें सौ-सौ मौंड़ा, जनत रेत हैं सौ-सौ ठौर।
पर तुम सौ जो मौंड़ा जन्में, वा मताई है नंइयां और॥
जैंसें तरइयों की टिमकारें, सबई दिशाओं खौं टिमकांय।
लेकिन पूरब दिशा अकेली, परतापी सूरज जन पाय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं अद्भुत-गुणसम्पन्न-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे महीतिलक! जिस प्रकार सूर्य को पूर्व दिशा ही उत्पन्न करती है अन्य दिशाएँ नहीं, उसी प्रकार एक आपकी ही माता ऐसी हैं जो आप जैसे पुत्ररत्न को पैदा कर सकीं, अन्य किसी माता को ऐसे पुत्ररत्न को पैदा करने का सौभाग्य उपलब्ध नहीं होता।

23. प्रेतबाधा निवारक-मोक्षमार्ग दर्शक

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्ण-ममलं तमसः पुरस्तात्।
त्वामेव सम्य - गुपलभ्य जयन्ति मृत्युम्,
नान्यःशिवःशिव-पदस्य मुनीन्द्र! पन्थाः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
परम पुरुष तुमको मुनि मानें, निर्मल नेता हो।
सूरज जैसे आप सुनहरे, तिमिर विजेता हो॥
बस तुमको ही सम्यक् पाकर, मृत्यु पर जय हो।
हे मुनीन्द्र! शिव मोक्ष मोक्षपथ, तुमसे अन्य न हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥
हे मुनीन्द्र! तुमखों मुनियों नैं, सूरज के रँग को बतलाऔ।
परम पुरुष जैंसे तुम निर्मल, मोह अँधेरौ तुंमई नशाऔ॥
मौत जीत कें मृत्युंजय तौ, बन जावें पाकर कैं तोय।
ये के सिवा मोक्ष पावे को, भलों नैं दूजौ रस्ता होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं सहस्त्र-नामाधीश्वर-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे योगीन्द्र! मुनिजन आपको परमपुरुष, कर्ममल रहित होने से निर्मल, मोहान्धकार का नाशक होने से सूर्य के समान तेजस्वी, आपकी प्राप्ति से मृत्यु न होने के कारण मृत्युञ्जय तथा आपके अतिरिक्त कोई दूसरा निरुपद्रव मोक्ष का मार्ग नहीं होने से आपको ही मोक्ष का मार्ग मानते हैं।

24. शिरोरोग शामक-प्रभु के पर्यायवाची नाम

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य-मसंख्य-माद्यम्,
ब्रह्माणमीश्वर - मनन्त - मनङ्ग - केतुम्।
योगीश्वरं विदित - योग-मनेक-मेकम्,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
अव्यय अचिन्त्य असंख्य विभु हो, आदिम ईश्वर हो।
अनंत ब्रह्मा काम-केतु हो, तुम योगीश्वर हो॥
विदित योग शुचि ज्ञान स्वरूपी, एक अनेक तुम्हीं।
संत जनों ने यथा आपकी, नामावली कहीं॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

सज्जन कहें आप खों अव्यय, विभू असंख्य आद्य अचिन्त्य।
विदित योग योगीश्वर ईश्वर, अनंगकेतू अमल अनंत॥
एक अनेक ज्ञान स्वरूप भी, और लेत ब्रह्मादि के नाम।
मोय कछू नें सूझै मैं तौ, करकें नमोऽस्तु करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं मनोवांछित-फलदायक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे गुणार्णव! गणधराधिक आपको आत्मा का कभी नाश न होने से **अव्यय** (अविनाशी), ज्ञान द्वारा सर्वव्यापक **विभु**, पूर्णरूप से न जान सकने रूप **अचिन्त्य**, जिसके गुण न गिने जा सकने से **असंख्य**, समस्त पूज्य देवों में प्रथम **आद्य**, मोक्षमार्ग के बनाने वाला **ब्रह्मा**, समस्त आत्मविभूति के स्वामी या तीन लोक के नाथ **ईश्वर**, जिसका अंत न हो ऐसे **अनंत**, अनुपम सुंदर **अनङ्गकेतु**, आत्मशुद्धि की विधि जानने वाले **योगीश्वर**, गुणों की अपेक्षा **अनेक**, आत्मा की अपेक्षा **एक**, **ज्ञानरूप** और **पूर्ण निर्मल** कहते हैं।

25. दृष्टिदोष निरोधक-बुद्ध शिव शंकर आप ही हो

बुद्धस्त्वमेव विबुधार्चित - बुद्धि-बोधात्,
त्वं शङ्करोऽसि भुवन-त्रय- शङ्करत्वात्।
धातासि धीर! शिव-मार्ग विधेर्विधानाद्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् पुरुषोत्तमोऽसि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
सुर अर्चित हो केवलज्ञानी, अतः बुद्ध तुम हो।
त्रय जग को सुख देने वाले, सो शंकर तुम हो॥
मोक्षमार्ग के आदि प्रवर्तक, धीर! विधाता हो।
तुम ही हो भगवन् पुरुषोत्तम, तुमरी जय-जय हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

विद्वानों सें पूजित हौ सो, आपई रये बुद्ध भगवान।
तीनईं जग में शांति करौ सो, आपई हौ शंकर भगवान॥
मोक्षमार्ग की विधि कैबें से, आपई हौ ब्रह्मा भगवान।
प्रभु! आपई नारायण हौ सो, मैं तौ खूबई करूँ प्रणाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं षड्दर्शन-पारंगत-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे पुरुषोत्तम! आप ही **बुद्ध** है क्योंकि आपकी बुद्धि या ज्ञान गणधर आदि विद्वानों तथा इन्द्र आदि से पूजनीय है। आप ही यथार्थ **शङ्कर** हैं क्योंकि आप अपनी प्रवृत्ति तथा उपदेश से तीनों लोकों में शान्ति कर देते हैं। हे धीर! आप ही सच्चे **विधाता** हैं क्योंकि आपने मुक्तिमार्ग का विधान किया है और आप ही सबसे उत्तम होने से **पुरुषोत्तम** हैं।

26. अर्धशिरः पीड़ा विनाशक-अतः आपको नमस्कार हो

तुभ्यं-नमस् - त्रिभुवनार्ति - हराय नाथ!
तुभ्यं-नमः क्षिति - तलामल - भूषणाय।
तुभ्यं - नमस् - त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं-नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
त्रिभुवन के दुख हर्त्ता प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो।
भू पर निर्मल भूषण प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो॥
त्रय जग के परमेश्वर प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो।
भवसागर शोषक जिन प्रभु को, सदा नमोऽस्तु हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

त्रय जग कौ दुख हरबे बारे, तोखों खूब नमोऽस्तु होय।
धरती के उजरे आभूषण, तोखों खूब नमोऽस्तु होय॥
हे! तीनइ जग के परमेश्वर, तोखों खूब नमोऽस्तु होय।
हे जिन! भवसागर के शोषक, तोखों खूब नमोऽस्तु होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं नानादुःख-विलीनक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे जिनेन्द्रदेव! हे नाथ! तीन लोक के संकटों को दूर करने वाले आपको नमस्कार करता हूँ। जगत के निर्मल अनुपम आभूषण स्वरूप आपको प्रणाम करता हूँ। तीन जगत के स्वामी आपको प्रणाम है और संसार समुद्र के सुखाने वाले आपको नमस्कार है।

27. शत्रु-उन्मूलक-पूर्ण निर्दोष

को विस्मयोऽत्र यदि नाम गुणै-रशेषैस्-
त्वं संश्रितो निरवकाशतया मुनीश!
दोषै - रुपात्त - विविधाश्रय-जात-गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिद-पीक्षितोऽसि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
सभी गुणों को इस जग में जब, आश्रय नहीं मिला।
इसमें क्या आश्चर्य आपका, आश्रय उन्हें मिला॥
किन्तु घमण्डी सभी दोष जो, पर में खूब टिकें।
हे मुनीश! वे दोष आपमें, सपने में न दिखें॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

हे मुनीश! जब सबइ गुणों नें, कितउँ कोनिया लौ नें पाई।
तौ तुमाय लिंगा सब दौरे, तुमखों पाके शांति पाई॥
और आसरे भौतइ पाकें, दोष घमण्डी सबरे होय।
वे सपने में दिखे नैं तुममें, ये में अचरज कैंसो मोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं सकलदोषनिर्मुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे मुनीश्वर! इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं कि आप समस्त गुणों से परिपूर्ण हैं। राग-द्वेष-काम-क्रोध-मान-माया-लोभ आदि दोष अन्य देवों का आश्रय पाकर गर्वीले (घमण्डी) हो गये हैं। अतः वे दोष आपके पास कभी स्वप्न में भी नहीं आते।

28. सर्व-मनोरथ प्रपूरक-अशोकवृक्ष प्रातिहार्य

उच्चै - रशोक - तरु - संश्रितमुन्मयूख -
माभाति रूपममलं भवतो नितान्तम्।
स्पष्टोल्लसत् - किरण-मस्त-तमो-वितानम्,
बिम्बं रवेरिव पयोधर - पार्श्ववर्ति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जिसकी ऊपर उठती किरणें, अंध विनाशक जो।
बादल दल के निकट विराजित, जैसे सूरज हो॥
निर्विकार हो सबसे सुन्दर, प्रभु तन ज्योतित हो।
उच्च अशोक वृक्ष के नीचे, खूब सुशोभित हो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

ऊँचे अशोक तरु के नेंचें, हे प्रभु! तुमरौ सुन्दर रूप।
ऐंसें सोहै जैंसें सांचउं, जे की फैंलें किरनें खूब॥
जौन अंधेरौ सबइ मिटाबै, बदरों के बाजू में होय।
ऐंसे सूरज बिम्ब सरीखे, लगौ सुहाने तुमतौ मोय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं अशोकतरु-विराजमान-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे अतिशयरूप! ऊँचे अशोकवृक्ष के नीचे आपका निर्मल कान्तिमान शरीर बहुत शोभा देता है। जैसे कि अन्धकार नष्ट करने वाली किरणों सहित सूर्य-बिम्ब बादलों के पास शोभित होता है।

29. नेत्रपीड़ा विनाशक-सिंहासन प्रातिहार्य

सिंहासने मणि - मयूख - शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम्।
बिम्बं वियद् - विलस - दंशुलता-वितानम्
तुङ्गोदयाद्रि - शिरसीव सहस्त्र-रश्मेः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
मणि किरणों से रंग बिरंगा, सुन्दर सिंहासन।
उस पर सोने जैसे चमके, नाथ! आपका तन॥
यों लगता ज्यों उदयाचल की, ऊँची शिखरों से।
नभ में पूरा हुआ प्रकाशित, सूर्य बिम्ब जैसे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जड़े खचाखच रत्न जौन में, जो छोड़ें किरनों की छाप।
ओ सिंहासन पै सोने से, सुन्दर ऐंसे चमको आप॥
जैंसे ऊँचे गिरी शिखर पै, नभ में अपनी किरन बिखेर।
सूरज बिम्ब सरीखे सोहौ, मोरी तरफ तनक तौ हेर॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं मणिमुक्ता-खचित-सिंहासन-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे रत्नजड़ित सिंहासनस्थ! हीरा, पन्ना, लाल, नीलम, पुखराज आदि अनेक प्रकार के रत्नों से जड़ित सिंहासन पर आपका स्वर्ण समान शरीर बहुत शोभा पाता है। जैसे उन्नत उदयाचल के शिखर पर फैली हुई अपनी किरणों के साथ सूर्य का बिम्ब शोभित होता है।

30. शत्रु-स्तम्भक-चँवर प्रातिहार्य

कुन्दावदात - चल - चामर-चारु-शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत - कान्तम्।
उद्यच्छशाङ्क - शुचिनिर्झर - वारि -धार-
मुच्चैस्तटं सुरगिरेरिव शातकौम्भम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
दोनों तरफ कुन्द पुष्पों सम, धवल चँवर ढुरते।
और बीच में स्वर्णिम तन सम, प्रभु शोभित रहते॥
यों लगता जैसे सुरगिरि के, स्वर्णिम तट पर से।
चन्दा सम उज्ज्वल झरनों की, धारायें बरसें॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

स्वच्छ कुन्द के फूलों जैंसे, भले ढुरत चँवरों के बीच।
तुमाई तौ सोने सी काया, चमकै जी पै दुनियाँ रीझ॥
ऐंसें सोहें जैंसे ऊँचे, मेरु के तट सोने घांई।
उंतई बैत झरनों सें ऊँगै, चम-चम चंदा की परछांई॥

ॐ ह्रीं अर्हंणमो घोरगुणाणं चतुःषष्टिचामर-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे चामराधिपते! इन्द्रों द्वारा कुन्दपुष्पों के समान सफेद चामर आप पर ढुरते समय आपका तपे हुए सोने के समान शरीर ऐसा शोभायमान होता है जैसे कि चन्द्र समान निर्मल जल की धारा से स्वर्णमय सुमेरुपर्वत का ऊँचा तट सुशोभित होता है।

31. राज्य-सम्मान दायक-छत्रत्रय प्रातिहार्य

छत्र - त्रयं तव विभाति शशाङ्क- कान्त-
मुच्चैः स्थितं स्थगित-भानु - कर - प्रतापम्।
मुक्ता - फल - प्रकर - जाल-विवृद्ध-शोभं,
प्रख्यापयत् - त्रिजगतः परमेश्वरत्वम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
रवि किरणों के ताप रोकने, उच्च अवस्थित हैं।
मुक्ता मणियों की लड़ियों से, सुन्दर निर्मित हैं॥
चन्दा जैसे तीन छत्र जो, सबको भाते हैं।
त्रय जग के तुम परमेश्वर हो, यही बताते हैं॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

चंदा जैंसे खूबई सोहें, रोकें सूरज कौ संताप।
मोती की झालर बारे जे, लटकें ऊपर आपई आप॥
तीनंई छतर बताबें जौ कि, तीनंई जग के तुम सम्राट।
मोखों दै दो अपनी छईयां, मैं तौ ताकूं तोरी बाट॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं छत्रत्रय-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे छत्रत्रयाधिपते! चन्द्रमा समान कान्तिमान, सूर्य की धूप को रोकने वाले, मोतियों की झालर से शोभायमान, आपके ऊपर ऊँचे लगे हुए तीन छत्र आपकी तीन जगत् की प्रभुता को प्रगट करते हुए आपकी शोभा बढ़ाते हैं।

32. संग्रहणी-संहारक-दुन्दुभि प्रातिहार्य

गम्भीर - तार - रव - पूरित - दिग्विभागस्-
त्रैलोक्य - लोक -शुभ - सङ्गम -भूति-दक्षः।
सद्धर्म - राज - जय - घोषण - घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि - र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जिसके गहरे उच्च स्वरों से, गुंजित दसों दिशा।
त्रय जग को सत्संग कराने, में जो निपुण रहा॥
दुन्दुभि बाजा यथा आपका, नभ में गूँज रहा।
मृत्युराज पर धर्मराज की, जय को बता रहा॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

सबई दिशाओं में जो गूंजै, हो-हो कैं खूबई गंभीर।
तीनईं जग खौं धर्म समागम, कौ वैभव दैबे में वीर॥
जैन धर्म के स्वामी जी के, यश की वाँचै जय-जयकार
बजें ढोल रमतूला नभ में, जोई दुन्दुभी प्रातिहार्य॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभयारीणं त्रैलोक्याज्ञा-विधायक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे दुन्दुभिपते! आकाश में अपनी गंभीर, तेज-मधुर ध्वनि द्वारा समस्त दिशाओं को शब्दायमान करके, त्रिलोकवर्ती जीवों को शुभ संगम कराने वाला, समीचीन धर्म के स्वामी आपकी जयध्वनि करता हुआ दुन्दुभि बाजा आपका सुयश प्रकट करता है।

33. सर्वज्वर संहारक-पुष्पवृष्टि प्रातिहार्य

मन्दार - सुन्दर - नमेरु - सुपारिजात-
सन्तानकादि - कुसुमोत्कर - वृष्टि-रुद्धा।
गन्धोद - बिन्दु- शुभ - मन्द - मरुत्प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां ततिर्वा॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
पारिजात मन्दार नमेरू, संतानक आदि।
सुर पुष्पों के साथ सुगंधित, हों जल कण आदि॥
मिश्रित नभ से मन्द-मन्द हो, दिव्य सुमन वर्षा।
यों लगती ज्यों जिनवर की हो, दिव्य वचन वर्षा॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

महकदार पानी की बूंदें, संगै-संगै मन्द बयार।
सुन्दर पारिजात संतानक, फूल नमेरु हैं मन्दार॥
जे सबरे मिल जब बरसें तौ, सांचउं ऐंसौ लागे मोय।
जैंसें तोरे वचनामृत की, नभ से झर-झर बरसा होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं समस्तजाति-पुष्पवृष्टि-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं...।

अर्थ—हे कुसुमवर्षाधिपते! सुगन्धित जल बिन्दुओं और मन्द पवन के साथ, मंदार, नमेरु, पारिजात आदि कल्पवृक्षों के पुष्पों की ऊर्ध्वमुखी और मनोहर वर्षा आपके ऊपर देवों के द्वारा आकाश में ऐसी होती है, मानो आपके वचनों की पंक्ति ही है।

34. गर्भ-संरक्षक-भामण्डल प्रातिहार्य

शुम्भत् - प्रभा- वलय-भूरि-विभा-विभोस्ते,
लोक - त्रये - द्युतिमतां द्युति-माक्षिपन्ती।
प्रोद्यद्- दिवाकर-निरन्तर - भूरि -संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशामपि-सोम-सौम्याम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
बहुत सूर्य हों उदित निरन्तर, जो उज्ज्वल चमके।
लेकिन चन्दा जैसा शीतल, जो सुन्दर दमके॥
जो जीते त्रय जग के सुन्दर, सभी पदार्थों को।
यों उज्ज्वल भामण्डल तेरा, जीते रातों को॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

तीनईं जग में जो चमकत हैं, उन सबरों की चमक लजाय।
सदा ऊगबे बारे लाखों, सूरज जैसों चमकत जाय॥
चन्दा जैसों सुन्दर-सुन्दर, भामण्डल है भौत विशाल।
जे की चमक रात खौं जीते, मोय बना दै चेतन लाल॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं कोटिभास्कर-प्रभामंडित-भामण्डल-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे भामण्डलाधिपते! आपके शरीर से निकली हुई कान्ति का गोलाकार मण्डल यानि भामण्डल जगत् के सभी प्रकाशमान पदार्थों की कांति को फीका कर देता है। करोड़ों सूर्यों के प्रकाश से भी अधिक प्रकाशमान भामण्डल की प्रभा से चाँदनी रात भी फीकी हो जाती है।

35. ईति-भीति निवारक-दिव्यध्वनि प्रातिहार्य

स्वर्गापवर्ग - गम - मार्ग - विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म- तत्त्व - कथनैक - पटुस्-त्रिलोक्याः।
दिव्य- ध्वनि - र्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
स्वर्ग मोक्ष जाने वालों को, जो दे दिग्दर्शन।
सच्चा धर्म तत्त्व कहने में, त्रय जग में सक्षम॥
सब भाषा में परिवर्तित हो, विशद अर्थ वाली।
यथा दिव्य ध्वनि नाथ! आपकी, ओम्-कार वाली॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

स्वर्ग मोक्ष जाबे बारों खौं, गैल ढूंढ़बे करै सहाय।
तीनईं जग के जीव जन्तु खौं, साँचौ धर्म तत्त्व समझाय॥
साँचौ हितकौ अर्थ बताबै, सब भाषा में घुल मिल जाए।
ऐंसी तोरी दिव्य धुनी है, तन मन के सब रोग नशाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं जलधरपटल-गर्जित-सर्वभाषात्मक-योजनप्रमाण-दिव्यध्वनि-प्रातिहार्ययुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे दिव्यध्वनिपते! हे परमदेव! आपकी दिव्यवाणी स्वर्ग-मोक्ष का मार्ग बताने वाली तथा जगत के लिये हितकर सत्धर्म, सात तत्त्व, नौ पदार्थ आदि का यथार्थ विशद कथन करने वाली एवं श्रोताओं की भाषामयी होती है।

36. लक्ष्मीदायक-स्वर्ण कमलों की रचना

उन्निद्र - हेम - नव - पङ्कज - पुञ्ज-कान्ती,
पर्युल् - लसन् - नख - मयूख - शिखाभिरामौ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
नए सुनहरे कमलों जैसे, चमकदार जो हैं।
जिनके नख की किरण शिखायें, कान्त मनोहर हैं॥
नाथ! आपके चरण-कमल यों, जहाँ आप धरते।
वहीं देवगण दिव्य कमल की, शुभ रचना करते॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

नए-नए से खिले खुले से, कुन्दन जैंसे कमल समूह।
जिनके नौं की किरनें चमकें, सबई ओर सें खूबइ खूब॥
ऐंसे चरन तुमारे सुन्दर, जितै धरौ तुम हे भगवान।
उतइं देव कमलों खौं रच कैं, धरती कर दें रतन समान॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं पादन्यासे-पद्मश्रीयुक्त-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे पूज्यपाद! विहार करते समय विकसित स्वर्ण कमल की कान्ति को अपने चरणों के नखों की कान्ति से सुन्दर कर देने वाले आपके चरण जहाँ पड़ने हैं वहाँ पर देव पहले ही स्वर्णमय कमल बनाते जाते हैं।

37. दुष्टता प्रतिरोधक-अद्वितीय विभूति

इत्थं यथा तव विभूति - रभूज् - जिनेन्द्र !
धर्मोपदेशन - विधौ न तथा परस्य।
यादृक् - प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् - कुतोग्रह - गणस्य विकासिनोऽपि॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
इस विधि दिव्य देशना वाला, अतिशय वैभव जो।
हे जिनवर! ज्यों हुआ आपका, नहीं अन्य का हो॥
जैसे अंध विनाशक कांती, सूरज की होती।
वैसी झिलमिल तारेगण की, कैसे हो ज्योति?॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जैंसें सूरज जोती सैं हो, अँधयारे कौ सत्यानाश।
टिम-टिम करते और ग्रहों कौ, का ऊँसौ हो सके प्रकाश॥
ऊंसई भयी विभूती तोरी, लगी सभा जब तत्त्व बताए।
का ऊंसी है और कोउ की, तुम सौ कोउ नजर नैं आए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं धर्मोपदेशसमये-समवसरणादि-लक्ष्मीविभूति-विराजमान-क्लीं-महा बीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे समवसरणाधिपते! धर्मोपदेश के समय समवसरणादिक जैसी विभूति आपको प्राप्त हुई, वैसी विभूति अन्य किसी देव को प्राप्त नहीं हुई। ठीक ही है कि जैसी कान्ति सूर्य की होती है वैसी कान्ति शुक्र आदि ग्रहों को प्राप्त नहीं हो सकती।

38. वैभववर्धक-हस्ति भय निवारक भक्ति

श्च्यो - तन् - मदाविल-विलोल - कपोल-मूल,
मत्त - भ्रमद् - भ्रमर - नाद - विवृद्ध-कोपम्।
ऐरावताभमिभ - मुद्धत - मापतन्तम्
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
मद से मटमैले गालों से, जब मद है झरता।
जिस पर भ्रमर गूँज से जिसका, क्रोध खूब बढ़ता॥
ऐसा ऐरावत जिद्दी गज, जब आगे दिखता।
तो भी तेरे शरणागत को, कभी न डर लगता॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

गण्डस्थल सैं मद झर रऔ है, जे पै भौंरे भी मंडराएँ।
जे सें ओ कौ क्रोध बढ़ै सो, इतै-उतै फिरकैं पगलाएँ॥
खूब ऊधमी सौ ऐरावत-हाथी सामें सैं आ जाए।
ओ खों देख डरै नैं वौ तौ, जो तोरी छइयाँ पा जाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं हस्त्यादि-सर्वदुर्द्धर-भयनिवारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभ-जिनाय अर्घ्यं...।

अर्थ—हे अभयप्रदाता! जिसके कपोल (गाल) से झर रहे मद पर भौंरे गूँज रहे हैं, अतः भौंरों की गुञ्जार सुनकर जिसको प्रचण्ड क्रोध आ गया है, ऐसे मदोन्मत्त ऐरावत जैसे हाथी को भी देखकर आपके आश्रित भक्तों को जरा भी भय नहीं होता।

39. सिंह-शक्ति संहारक-सिंह भय से मुक्त जिनेन्द्र भक्ति

भिन्नेभ - कुम्भ - गल - दुज्ज्वल-शोणिताक्त,
मुक्ता - फल - प्रकरभूषित - भूमि - भागः।
बद्ध - क्रमः क्रम-गतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रम - युगाचल-संश्रितं ते॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जिसने गज के गंडस्थल को, चीर फाड़ डाले।
लाल-लाल गज मुक्ता भू पर, खूब बिछा डाले॥
ऐसा सिंह भी निज पंजों से, उनको क्या मारे ?
जिसने जिनवर के चरणों का, लिया सहारा रे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

फाड़-फूड़ कैं गण्डस्थल खों, हाथी के सिर सैं बगराए।
खून-मांस सैं लतपथ उजरे, मुक्ताओं सैं भू चमकाए॥
खूब छलांगें मार-मार कें, करैं वार पंजों में डार।
ऐंसौ शेर नैं मारे ओखों, जो पाए प्रभु चरन-पहार॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचबलीणं युगादिदेव-नामप्रसादात् केशरिभय-विनाशक-क्लींमहाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे विभो! हाथी के मस्तक को अपने नाखूनों से फाड़कर जिसने रक्त से भीगे गजमुक्ताओं से पृथ्वी सजा दी है, तथा शिकार करने के लिये तैयार, ऐसा विकराल सिंह अपने पंजों में आये हुए आपके चरणों की शरण लेने वाले मनुष्य पर आक्रमण नहीं करता है।

40. सर्वाग्नि-शामक-नाम स्मरण से दावानल शमन

कल्पान्त - काल - पवनोद्धत - वह्नि -कल्पं,
दावानलं ज्वलित - मुज्ज्वल - मुत्स्फुलिङ्गम्।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख - मापतन्तं,
त्वन्नाम -कीर्तन - जलं शमयत्यशेषम्॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥

अंगारों की चिंगारी जो, उज्ज्वल धधक रही।
प्रलयकाल की तेज पवन से, जो तो भड़क रही॥
ऐसी वह वन आग सभी को, जो खाने आए।
उसे आपका प्रभु-कीर्तन जल, शीघ्र बुझा जाए॥

आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

भौत भयंकर प्रलयकाल की, बेहर सें जो भई विकराल।
जे के चिट-चिट तिलगा उचटें, खूबई धधके लालई लाल॥
दुनियां खौं खाबे सी दौरै, वन-आगी सामें सैं आए।
तौ भी तोरे नाम गुणों के, कीर्तन जल सैं सब बुझ जाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं संसाराग्नि-तापनिवारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय अर्घ्यं।

अर्थ—हे भगवन्! प्रलय-समय जैसी तेज वायु से धधकती हुई वन की अग्नि, जिसमें कि भयानक फुलिंग (चिंगारी) बहुत ऊँची निकल रहीं हों ऐसी भयानक हों कि मानो सारे संसार को भस्म कर डालेगी, उसके सामने आ जाने पर हृदय में लिया हुआ आपका नाम रूपी जल तत्काल उसको बुझाकर सान्त कर देता है।

41. सर्पभय भंजक-भुजंग भयहारी नाम नागदमनी

रक्तेक्षणं समद - कोकिल - कण्ठ-नीलम्,
क्रोधोद्धतं फणिन - मुत्फण - मापतन्तम्।
आक्रामति क्रम - युगेण निरस्त - शङ्कस्-
त्वन्नाम - नाग दमनी हृदि यस्य पुंसः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
मतवाली कोयल के कंठों, जैसा हो काला।
क्रोधित उठे हुए फन वाला, लाल नयन वाला॥
ऐसा नाग लांघ जाते वे, पग से निर्भय हो।
प्रभु की नाम नाग-दमनी को, रखें हृदय में जो॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

मतवारी कोयल सी करिया, जे की आँखें लालई लाल।
करकैं क्रोध भऔ उद्दण्डी, तबई उठाकें फन विकराल॥
ऐंसे सांप खों दोई पांव से, हो कें निडर लांक वो जाए।
जे के दिल में तुमाय नाम की, दवा नाग दमनी आ जाए॥

ॐ ह्रीं अर्हंणमो खीरसवीणं त्वन्नामनागदमनी-शक्तिसम्पन्न-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे सातिशय नाम वाले देव! आपके शुभ नाम रूपी नागदमनी (जड़ीबूटी) को भक्ति-श्रद्धा पूर्वक अंतःकरण में धारण करने वाले मनुष्य उस भयंकर उद्यत फुँसकारते हुए जहरीले नाग को भी निर्भय होकर पार कर जाते हैं। जिसके नेत्र धधकते हुए अंगारों की तरह आरक्त वर्ण हो रहे हों और जो काली कोयल के कंठ के समान काला हो तथा जो क्रोधित होकर विशाल फण फैलाये डसने के लिये अतिशीघ्र पवनवेग जैसा झपटा चला आता हो।

42. युद्धभय विध्वंसक-संग्रामभय विनाशक जिन-कीर्तन

वल्गत् - तुरङ्ग - गज - गर्जित - भीमनाद,
माजौ बलं बलवता - मपि - भूपतीनाम्।
उद्यद् - दिवाकर - मयूख - शिखापविद्धम्
त्वत्कीर्तनात्तम - इवाशु भिदामुपैति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जहाँ हिनहिनाहट घोड़ों की, गज की चिंघाड़ें।
यों रणक्षेत्र जहाँ बलशाली, शत्रु ललकारें॥
वहाँ आपके बस कीर्तन से, कष्ट टलें ऐसे।
उगते सूर्य किरण से जल्दी, अंध नशे जैसे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जितै खूब घुड़वा उचकत हों, होय हाथियों की चिंघार।
उतईं भयंकर शत्तुर सेना, कर रई होवै खूब दहार॥
युद्धों में तोरे कीर्तन सें, शत्रु कौ भऔ ऐंसौ काम।
जैंसें उगत सूर्य की किरनें, करें अंध कौ काम तमाम॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं संग्राममध्ये-क्षेमङ्कर-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे विश्व उद्धारक देव! जहाँ घोड़े भयानक हींस रहे हैं, हाथी चिंघाड़ रहे हैं, घमासान लड़ाई से उड़ती हुई धूल ने सूर्य के प्रकाश को भी छिपा दिया है, ऐसी भयानक युद्ध भूमि में आपका स्मरण करने से बलवान् राजाओं की सेना ऐसे हट जाती है जैसे सूर्य उदय होने से अन्धकार हट जाता है।

43. सर्व शान्तिदायक-शरणागत की युद्ध में विजय

कुन्ताग्र - भिन्न - गज - शोणित - वारिवाह,
वेगावतार - तरणातुर - योध - भीमे।
युद्धे जयं विजित - दुर्जय - जेय - पक्षास्-
त्वत्पाद-पङ्कज-वनाश्रयिणो लभन्ते॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
योद्धाओं ने भालों द्वारा, फाड़ दिये हाथी।
रक्त वेग में आने-जाने, को आतुर साथी॥
ऐसे क्रूर युद्ध में जो जन, तेरा आश्रय लें।
वे अपराजित दुश्मन पर भी, तुरत विजय पा लें॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

भालों की नोकों से फाड़े, हथियों कौ बै रऔ है खून।
ओई धार खों पार करन खों, जोद्धाओं खों चढ़ौ जुनून॥
ऐंसे महाभयंकर रन में, शत्रु पै जय मुश्कल होय।
तो तोरौ पा चरन कमल वन, शत्रु पै जय पक्की होय॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं वनगजादि-भयनिवारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे विश्व विजेता! जिस युद्ध में भाले वर्छियों के द्वारा छिन्न-भिन्न हाथियों के शरीर से निकले हुए रुधिर के प्रवाह को पार करने में बड़े-बड़े शूरवीर योद्धा भी व्याकुल हो जाते हैं, ऐसे भयानक विकराल युद्ध में आपके चरणों की शरण लिए भक्त पुरुष दुर्जन शत्रु को भी जीत लेते हैं।

44. सर्वापत्ति विनाशक-नाम स्मरण से निर्विघ्न समुद्र यात्रा

अम्भोनिधौ क्षुभित - भीषण - नक्र - चक्र-
पाठीन - पीठ-भय-दोल्वण - वाडवाग्नौ।
रङ्गत्तरङ्ग - शिखर - स्थित - यान-पात्रास्-
त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद्-व्रजन्ति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जहाँ भयंकर बड़वानल हों, मगरमच्छ भी हों।
बहुत बड़ी पाठीन मीन से, सागर कंपित हों॥
जहाँ फँसे जलयान तरंगित, जिनके हो जाते।
वहीं आपके बस सुमरन से, अभय लक्ष्य पाते॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

जितै भयंकर मगरा होवें, और मछरियों की टकरार।
संगै-संगै बडवानल सैं, भऔ समुन्दर लहरोंदार॥
ओ में फँसौ जहाज होए तौ, यात्री तौ खूबई घबरांए।
लेकिन तोरौ सुमरन करकैं, होकें निडर पार हो जांए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं संसाराब्धि-तारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे तारण तरण देव! जहाँ भयानक मगर, बड़े मच्छ, आदि जलचर जीवों ने क्षोभ मचा रक्खा है तथा वड़वानल से भयानक समुद्र में विकराल तूफान के समय आपका स्मरण करने से मनुष्य अपने जलयान को उठती हुई तरंगों के ऊपर से बिना किसी कष्ट के ले जाते हैं।

45. जलोदरादिरोग एवं सर्वापत्ति संहारक-व्याधि विनाशक चरणरज

उद्भूत - भीषण - जलोदर - भार - भुग्नाः,
शोच्यां दशा-मुप गताश्-च्युत-जीविताशाः।
त्वत्पाद - पङ्कज - रजो - मृत - दिग्ध - देहाः,
मर्त्या भवन्ति मकर-ध्वज-तुल्यरूपाः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥

हुआ भयंकर रोग जलोदर, जिससे कमर झुकी।
करुण दशा से जीवन आशा, जिनकी बिखर चुकी॥
ऐसे मानव नाथ! आपकी, चरणामृत पाके।
कामदेव सम रोग मुक्त हों, सुन्दर बन जाते॥

आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

भौत भयंकर भऔ जलोदर, जे सें झुक गई हो करहाई।
जे सें भई दयनीय दशा सो, जीवे की सब आश गंमाई॥
असाध्य रोगी भी तौ तोरे, चरनामृत की धूर लगांए।
कामदेव सें खूबई जादा, स्वस्थ मस्त नौनें हो जांए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं दाह-ताप-जलोदराष्टदशकुष्ट-सन्निपातादि-रोगहारक-क्लीं-महाबीजाक्षर-सहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे अजरामर प्रभो! भीषण जलोदर आदि रोगों के कारण जो खेद-खिन्न हैं, भयानक रोग के कारण जिनकी दशा शोचनीय है, जिनके जीवित रहने की आशा नहीं रही, ऐसे रोगीजन यदि आपके चरणों की धूल अपने शरीर से लगाते हैं तो वे नीरोग होकर कामदेव के समान सुन्दर हो जाते हैं।

46. बन्धन विमोचक-नाम जाप से बंधन मुक्ति

आपाद - कण्ठमुरु - शृङ्खल - वेष्टिताङ्गा,
गाढं-बृहन्-निगड-कोटि निघृष्ट - जङ्घाः।
त्वन् - नाम - मन्त्र - मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
बड़ी-बड़ी सांकल के द्वारा, बाँधा बहुत कड़ा।
पैरों से सम्पूर्ण कंठ तक, तन जिनका जकड़ा॥
महाबेड़ियों से घिर करके, जिनके पाँव छिले।
तेरे नाम मंत्र से उनके, भय के बंध टले॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥
गोड़े सें लै कें घुटकी लौं, बड्डी कसी साँकरें होंए।
जे की नौकों सें तन छिल गऔ, खूबई छिल गईं जांगें होंए॥
ऐंसे मान्स निरंतर सुमरें, तोरे नाम मंत्र कौ जाप।
तौ झट्टईं बंधन के भय सैं, मुक्त होंए वे आपई आप॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं नानाविध-कठिनबंधन-दूरकारक-क्लीं-महाबीजाक्षरसहित-श्री वृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे बन्ध-विमोचन! बन्दीगृह (जेल) में जिनको पैर से कंठ तक भारी जंजीरों से जकड़ दिया है, बेड़ियों की रगड़ से जिनकी जाँघें छिल गई हैं, ऐसे मनुष्य आपके नाम को स्मरण करते हुए तुरन्त स्वयं बन्धन और भय से छूट जाते हैं।

47. अस्त्र शस्त्रादि शक्ति निरोधक-संपूर्णभय निवारक जिन स्तवन

मत्त-द्विपेन्द्र - मृग - राज - दवानलाहि-
संग्राम - वारिधि - महो - दर - बन्ध -नोत्थम्।
तस्याशु नाश - मुप - याति भयं-भियेव,
यस्तावकं स्तव-मिमं मतिमान-धीते॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
जो ज्ञानी जन इस संस्तव को, भक्ति सहित पढ़ता।
उसे शेर पागल हाथी का, कभी न भय रहता॥
युद्ध जलोदर सागर बन्धन, दावानल का भय।
बाल न बाँका उनका करले, उनकी होवे जय॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

हे बाबा! तोरौ जौ स्तव, ज्ञानी जो भी पढ़ै पढ़ाए।
वौ तौ शेर नशीले हांती, साँप युद्ध सैं नैं घबराए॥
ओ कौ सागर और जलोदर बन्धन कौ डर ऐंसो जाए।
जैंसें डर खुद डरा-डरा कैं, झट्टइँ गदबद दै भग जाए॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसिद्धायदणाणं बहुविधविघ्न-विनाशक-क्लीं-महा-बीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे संकट-निवारक प्रभो! जो मनुष्य आपके इस स्तवन को पढ़ता है उसके मदोन्मत्त हाथी, सिंह, दावानल, सर्प, युद्ध, समुद्र, जलोदर आदि रोग तथा बन्दीगृह हथकड़ी बेड़ी आदि के बन्धन का भय स्वयं तत्काल डर कर नष्ट हो जाता है।

48. सर्व-सिद्धिदायक-स्तुति का फल

स्तोत्र-स्त्रजं तव जिनेन्द्र गुणैर्निबद्धाम्,
भक्त्या मया रुचिर - वर्ण-विचित्र-पुष्पाम्।
धत्ते जनो य इह कण्ठ - गता- मजस्रम्,
तं मानतुङ्ग-मवशा-समुपैति लक्ष्मीः॥

आदि प्रभु के श्रीचरणों में, पहले शीश धरूँ।
फिर भक्तामर के काव्यों का, मंगल गीत करूँ॥
मैंने यह जो भक्ति भाव से, गुण तेरे चुनके।
बहुरंगी पुष्पों की माला, गूँथी है बुनके॥
इस संस्तव माला को जो नित, अपने कंठ धरे।
हे जिनवर! वह 'मानतुंग' सम, लक्ष्मी अवश वरे॥
आदि प्रभु को करके नमोस्तु, भक्ति रचाऊँ मैं।
मानतुंग मुनिवर के जैसी, मुक्ति पाऊँ मैं॥

हे जिनेन्द्र! जा मैंने तोरी, भक्ति गुणौ कौ धागौ डार।
माला गूंथी रंग बिरंगी, अक्षर वारी फूलोंदार॥
तोरी जा स्तुति की माला, धरै गरे में जो दिन रात।
'मानतुंग' के घांई बनैं वे, मोच्छ लच्छमी झट्टइँ पात॥

ॐ ह्रीं अर्हं णमो लोए सव्वसाहूणं सकलकार्य-साधनसमर्थ-क्लीं-महा-बीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय दीपं प्रज्ज्वलनं.../अर्घ्यं...।

अर्थ—हे जिनेन्द्र! विविध वर्णमय आपके गुणों से गूँथी हुई जो मैंने भक्ति से यह स्तुति रूपी माला बनाई है, जो पुरुष इसको अपने गले में सतत धारण करता है, उस उच्च ज्ञानी/सम्मानी व्यक्ति को मुक्ति लक्ष्मी शीघ्र प्राप्त होती है।

===

पूर्णार्घ्य

लाखों और करोड़ों मुख से, कर न सकेंगे हम गुणगान।
बिना आपके आ न सकेंगे, जहाँ विराजे हो भगवान्॥
परेशानियाँ लाभ-हानियाँ, प्रभू कृपा से हों आसान।
अतः हाथ सिर पर रख दो तो, हम बन जाएंगे भगवान॥
केवल कृपा आपकी पाने, अड़तालीस चढ़ाए अर्घ्य।
फिर भी मन में तृप्ति नहीं तो, हम ले आए हैं पूर्णार्घ्य॥
अर्घ्य चढ़ाकर भाव बनाए, संकट में ना हों हैरान।
आतम परमातम की श्रद्धा, मिले आप से बस भगवान्॥

ॐ ह्रीं अर्हं अष्टचत्वारिंशद्दलकमलाधिपति-क्लीं महाबीजाक्षरसहित-श्रीवृषभजिनाय पूर्णार्घ्यं...।

(यदि अनुकूलता हो तो ऋद्धि मंत्र के अर्घ्य भी चढ़ा सकते हैं)

ऋद्धि-मंत्रों के अर्घ्य

1. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
2. ॐ ह्रीं अर्हं णमो ओहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
3. ॐ ह्रीं अर्हं णमो परमोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
4. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
5. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अणंतोहिजिणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
6. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कोट्ठबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
7. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बीजबुद्धीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
8. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पदानुसारीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
9. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सभिण्णसोदाराणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
10. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सयंबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
11. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पत्तेयबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।

12. ॐ ह्रीं अर्हं णमो बोहियबुद्धाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
13. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उजुमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
14. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउलमदीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
15. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
16. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चउदसपुव्वीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
17. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अट्ठंगमहानिमित्तकुसलाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
18. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विउव्वइड्ढिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
19. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विज्जाहराणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
20. ॐ ह्रीं अर्हं णमो चारणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
21. ॐ ह्रीं अर्हं णमो पण्णसमणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
22. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आगासगामीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
23. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आसीविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
24. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दिट्ठिविसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
25. ॐ ह्रीं अर्हं णमो उग्गतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
26. ॐ ह्रीं अर्हं णमो दित्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
27. ॐ ह्रीं अर्हं णमो तत्ततवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
28. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महातवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
29. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरतवाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
30. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
31. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरपरक्कमाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
32. ॐ ह्रीं अर्हं णमो घोरगुणबंभचारीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
33. ॐ ह्रीं अर्हं णमो आमोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
34. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खेल्लोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।

35. ॐ ह्रीं अर्हं णमो जल्लोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
36. ॐ ह्रीं अर्हं णमो विप्पोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
37. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वोसहिपत्ताणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
38. ॐ ह्रीं अर्हं णमो मणबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
39. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वचबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
40. ॐ ह्रीं अर्हं णमो कायबलीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
41. ॐ ह्रीं अर्हं णमो खीरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
42. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सप्पिसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
43. ॐ ह्रीं अर्हं णमो महुरसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
44. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अमियसवीणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
45. ॐ ह्रीं अर्हं णमो अक्खीणमहाणसाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
46. ॐ ह्रीं अर्हं णमो वड्ढमाणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
47. ॐ ह्रीं अर्हं णमो सव्वसिद्धायदणाणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।
48. ॐ ह्रीं अर्हं णमो लोए सव्वसाहूणं झ्रौं झ्रौं नमः अर्घ्यं...।

जाप्य मंत्र :
ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं अर्हं श्री वृषभनाथ-जिनेन्द्राय नमो नमः।

समुच्चय जयमाला

(दोहा)

मानतुंग सी बेड़ियाँ, आदिनाथ से कर्म।
भक्त तोड़ने को धरें, जयमाला का धर्म॥

(ज्ञानोदय)

हमको पंचमकाल मिला तो, चौबीसी तो मिल न सकी।
लेकिन उनके बिम्ब पूजकर, भक्ति भावना जाग उठी॥

उनमें प्रथम वृषभ तीर्थंकर, जन्म अयोध्या में धारे।
तत्त्वज्ञान दे अष्टापद से, मोक्ष पधारे प्रभु प्यारे॥1॥
अतः भरत भारत में शासन, आदिवीर का चलता है।
तत्त्व विरोधी इंसानों को, सही धर्म यह खलता है॥
तभी धर्म धर्मात्मा-जन को, उपसर्गों के शूल मिलें।
पर उसका हो बाल न बाँका, जिसे आदि की धूल मिले॥2॥
ऐसी एक घटी दुर्घटना, जो श्रद्धा मजबूत करे।
जिनशासन का मर्म समझने, हर मत को मजबूर करे॥
राजा भोज बड़ा ज्ञानी था, धर्मालू श्रद्धालू था।
किन्तु एक मंत्री था उसका, जो मानी ईर्ष्यालू था॥3॥
जिनशासन का कट्टर दुश्मन, सबको जिसने भड़काया।
तभी धनंजय कवि की रचना, चुरा 'नाममाला' लाया॥
जिसके कारण कालीदास के, विचलन में न हुई देरी।
रचनाओं को जैन चुराते, नाममाला तो है मेरी॥4॥
बुला धनंजय को ये पूछा, ये रचना क्या तेरी है।
कालीदास कहते यह मेरी, कहें धनंजय मेरी है॥
यह रचना सचमुच किसकी है, यह निर्णय तो मुश्किल था।
जिसे याद हो उसकी है यह, राजा का ऐसा हल था॥5॥
कालीदास तो सुना न पाए, कही धनंजय ने पूरी।
सब समझे पर कुछ न बोले, थी राजा की मजबूरी॥
करके याद सुनाने से क्या, उनकी हो जाती रचना।
कालीदास भड़ककर बोले, यह तो मेरी है रचना॥6॥
ऐसे ही जैनों के मुनि भी, रचना खूब चुराते हैं।
अगर परीक्षा करनी तो मुनि, मानतुंग को लाते हैं॥

जिनको लाने पहुँचे तो वो, आने को तैयार न थे।
जिनशासन की शान घटाने, समझौते स्वीकार न थे॥7॥
तब राजा ने क्रोधित होकर, जंजीरों से बँधवाकर।
अड़तालिस दरवाजे वाले, कारागृह में डलवाकर॥
बड़े-बड़े ताले डलवाए, पहरा खूब लगाया था।
मानतुंग मुनिवर को सबने, झुकने को धमकाया था॥8॥
झुके न टूटे न घबराए, ना ही आतम ध्यान किया।
लेकिन आदिनाथ स्वामी का, भक्तामर ये गान किया॥
ज्यों पद बने खुले त्यों ताले, सब जंजीरें टूट चुकीं।
देख जेल के बाहर मुनि को, प्रजा शर्म से झुकी-झुकी॥9॥
क्रमशः तीन बार मुनिवर को, कारागृह में डलवाए।
लेकिन सुबह देखकर बाहर, राज-प्रजा कवि घबराए॥
इस घटना की खबर हुई तो, लगी गूँजने जय-जयकार।
थे शर्मिंदा राज-प्रजा कवि, खूब हुई फिर हाहाकार॥10॥
क्षमा याचना कर राजा ने, खुद को दोषी ठहराया।
क्षमा दान कर सबको मुनि ने, जैन धर्म को चमकाया॥
भक्तामर स्तोत्र की रचना, दुनियाँ में विख्यात हुई।
आदिनाथ से मानतुंग की, जग में नई प्रभात हुई॥11॥
चाहे ब्राह्मी सुन्दरी हो या, सोमा सीता रानी हो।
चाहे भरत बाहुबलि हों या, वादिराज सम ज्ञानी हो॥
जो भी तुम्हें पुकारे उसकी, हरो सभी दुख जंजीरें।
आदिप्रभु सम वो प्रकटा ले, निज में जिन की तस्वीरें॥12॥
अतः बुजुर्गों ने बनवाए, आदिप्रभु के मंदिर हैं।
तभी अयोध्या अष्टापद से, भक्तों के मन मंदिर हैं॥

नजर-नजर में डगर-डगर में, आदिप्रभु के अतिशय हों।
भले जमाना दुश्मन हो पर, जिन भक्तों की ही जय हो॥13॥
पूरव पश्चिम उत्तर दक्षिण, विजय पताका उड़ती है।
कुण्डलपुर के बाबा जैसी, सबमें भक्ति उमड़ती है॥
यदि मुनि 'सुव्रत' मानतुंग सम, भक्तामर का पाठ करें।
मिटें रोग सब हटें उपद्रव, जिनशासन के ठाठ बढ़ें॥14॥

(सोरठा)

भुक्ति मुक्ति की राह, आदिप्रभु की भक्ति है।
सो नमोऽस्तु की चाह, रखते जब तक शक्ति है॥

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वकर्मविनाशनाय आगतविघ्नभयनिवारणाय श्रीवृषभ-जिनाय अनर्घपदप्राप्तये समुच्चय-जयमाला पूर्णार्घ्यं...।

(दोहा)

वृषभनाथ स्वामी करें, विश्वशांति कल्याण।
प्रासुक जल की धार दे, हम पूजत भगवान्॥

(शांतये शांतिधारा)

कल्पवृक्ष के पुष्प सम, पुष्पांजलि पद लाए।
भव दुःखों को मेंट दो, वृषभनाथ जिनराय॥

(पुष्पांजलिं...)

===

आचार्य श्री विद्यासागरजी महाराज का अर्घ्य

(ज्ञानोदय)

अतुलनीय विद्यागुरुवरजी, तुल न सके उपकरणों से।
सब उपमाएँ फीकी पड़तीं, सज न सके आभरणों से॥
यूँ तो गुरु के सिर पर कोई, ताज नहीं आवाज नहीं।
पर ऐसा है कौन यहाँ दिल, जिस पर गुरु का राज नहीं॥

ॐ ह्रूं आचार्य गुरुवर श्रीविद्यासागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

भक्तामर महिमा

(लय–श्री सिद्धचक्र का पाठ...)

श्री भक्तामर स्तोत्र, जलाकर ज्योत, पाठ कर ध्याएँ।
भक्तामर महिमा गाएँ॥

कवि उज्जैनी के हार गए, कविराज धनंजय जीत गए।
तब हुए विरोधी जिनशासन झुठलाएँ, शास्त्रों को गलत बताएँ॥1॥
मुनि मानतुंग को झुठलाए, नृप राज्यसभा में बुलवाए।
मुनिराज वहाँ क्यों धर्म नशाने जाएं, मुनि मूलाचार निभाएँ॥2॥
तब राजा गुस्से में आके, हथकड़ी बेड़ियाँ बँधवाके।
उपसर्ग किया पर मुनिवर ना घबराए, धर समता प्रभु को ध्याए॥3॥
मुनि को बंदीगृह में डाले, लगवाए अड़तालीस ताले।
मुनि भक्तामर रच आदिनाथ को ध्याए, भक्ति की महिमा गाए॥4॥
ज्यों एक छन्द रचता जाता, त्यों इक ताला खुलता जाता।
सम्पूर्ण रचा तो मुनिवर मुक्ति पाए, यह देख सभी घबराए॥5॥
राजा फिर लगवाए ताले, फिर से बंदीगृह में डाले।
यों तीन बार भी बंधन ना बँध पाए, तब राज-प्रजा पछताए॥6॥
राजा अतिशय लख चकित हुआ, कर क्षमा याचना लजित हुआ।
कर मुनि को नमोस्तु निज अपराध नशाए, सब जिनशासन अपनाए॥7॥
तब भक्तामर विख्यात हुआ, मुनि मानतुंग का नाम हुआ।
हर ऋद्धि मंत्र भी अतिशय खूब दिखाए, हम पाठ रचाने आए॥8॥
जो भक्तामर का पाठ करें, जप अनुष्ठान या ध्यान करें।
उनके संकट भय रोग शोक नश जाएं, मनवांछित फल को पाएँ॥9॥
यह क्रियाकांड है ना केवल, सम्यक्त्व साधना है मंगल।
जो रत्नत्रय दे शुद्धातम प्रकटाए, 'सुव्रत' को मोक्ष घुमाए॥10॥

श्री भक्तामर स्तोत्र, जलाकर ज्योत, पाठ कर ध्याएँ।
भक्तामर महिमा गाएँ॥

===

श्री भक्तामर आरती

(छूम छूम छन ना... ना...)

छूम छूम छन ना ना बाजे, बाबा करूँ आरतिया।
करूँ आरतिया बाबा करूँ आरतिया॥ छूम छूम....
भक्तामर स्तोत्र निराला, वृषभनाथ की गुण मणिमाला-२
मानतुंग गुरु वाणी, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
नाभिराय के राजदुलारे, मरुदेवी के नयन सितारे-२
जन्म अयोध्या धारे, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
ज्यों-ज्यों छन्द रचित हो जाते, ताले सभी चटकते जाते-२
अतिशय की बलिहारी, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
कर्म रोग उपसर्ग विजेता, मोक्षमार्ग भक्तों के नेता-२
मुक्तिवधू के स्वामी, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...
दुख संकट भय भूत मिटाओ, ऋद्धि-सिद्धि सुखशांति दिलाओ२
'सुव्रत' को भी तारो, बाबा करूँ आरतिया॥ करूँ...

===

मुनि श्री सुव्रतसागरजी महाराज का अर्घ्य

अष्ट द्रव्य ले सोच रहे हम, और समर्पित क्या कर दें।
तन मन जीवन गुरु चरणों में, जल्दी अर्पित हम कर दें॥
गुरु चरणों के योग्य बनें हम, सुव्रत दान हमें दे दो।
कर नमोऽस्तु यह अर्घ्य चढ़ाएँ, अपनी शरण हमें ले लो॥

ॐ ह्रः श्री सुव्रतसागर मुनीन्द्राय अनर्घपदप्राप्तये अर्घ्यं...।

श्री वृषभनाथ आरती

(लय : विद्यासागर की गुणआगर की...)

आदीश्वर की, जगदीश्वर की, शुभ मंगल दीप सजाय के,
हम आज उतारें आरतिया॥
नाभिराय श्री मरुदेवी के, गर्भ विषें प्रभु आए,
नगर अयोध्या जन्म लिया था, सब जन मंगल गाए।
प्रभु जी सब जन मंगल गाए॥
पुरुदेवा की, जिनदेवा की, हो बार-बार गुण गायके,
हम आज उतारें आरतिया॥ १॥
आदिकाल में बने स्वयंभू, धर्मध्वजा फहराए,
षट्कर्मों की शिक्षा देकर, मोक्षमार्ग बतलाए।
प्रभु जी मोक्षमार्ग बतलाए॥
ब्रह्मेश्वर की, सर्वेश्वर की, हो जग-मग ज्योति जगाय के,
हम आज उतारें आरतिया॥ २॥
सारे जग से पूजित प्रभुवर, हम दर्शन को आए,
मन-वच-तन से आरती करके, झूम-झूम सिर नाए।
प्रभु जी झूम-झूम सिर नाए॥
जिन स्वामी की, शिवधामी की, हो 'सुव्रत' दर्शन पाय के,
हम आज उतारें आरतिया॥ ३॥
आदीश्वर की, जगदीश्वर की, शुभ मंगल दीप सजाय के।
हम आज उतारें आरतिया॥

===